अमरीका-पथ-प्रदर्शक

लेखक और प्रकाशक

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

रचयिता

"आश्चर्यजनक-घंटी", "अमरीका-दिग्दर्शन", "अमरीका के विद्यार्थी", "जातीय-शिक्षा", "कैलाश-यात्रा", "मनुष्य के अधिकार", "संजीवनी-बूटी" और "राजर्षि भीष्म" इत्यादि।

"Say fellow! Why rot here?
Let us go out and see the World."

—*Traveller.*

पं० सुदर्शनाचार्य्य बी० ए० के प्रबन्ध से सुदर्शन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित।

संवत् १९७५

मूल्य सात आने

प्रथम संस्करण की भूमिका

अमरीका एक ऐसा देश है जहां मनुष्य की सब इच्छाएँ पूरी हो सकती हैं। विद्या के अभिलाषी को विद्या मुफ्त मिल सकती है, धन के इच्छुक को धन प्राप्ति के सामान वहां मिलते हैं, यशाभिलाषी को यश लाभ करने के यहां अटूट अवसर हैं—कहना क्या, जो जिस वस्तु की चाहना करे वही उसे वहां मिल सकती है। भारत को इस समय बहुत सी बातों की ज़रूरत है। विद्यार्थी के लिए विद्याध्ययन का यहां पूरा सामान नहीं, उसको यह सब सुविधाएँ यूनाइटेड स्टेट्ज़ में ही मिल सकती हैं। निर्धन छात्र वहां जाकर अपने बाहुबल से अपनी ईश्वर-दत्त शक्तियों का उपयोग कर, महान योग्यता पा, अपनी मातृ-भूमि को लौट, सेवा कर सकता है। यदि भारत को कृषि विज्ञान की आवश्यकता है तो उसकी इस कमी को अमरीका ही पूरा कर सकता है। यदि हमारे देशको तिजारत के नुसखे सीखने हैं, जिनसे असंख्य धन की प्राप्ति हो, तो भी उसके लिए अमरीका ही जाना ज़रूरी है। यदि हमें अच्छे कला-कौशल-युक्त भवन रचने हैं तो भी हमें वहां ही जाना चाहिए।

गरज़ कि भारत की दरिद्रता दूर करने के साधनों का यदि ज्ञान करना हो तो हमें अमरीका जाना चाहिए। परमात्मा का धन्यवाद है कि इस देश के युवकों को इस बात की लगन लगी है कि वे अपने देश के बाहर जावें और बाहर से सामान ला

कर अपनी मातृभूमि का उद्धार करें, मगर वे जानते नहीं कि किस तरह वे अमरीका पहुंच सकते हैं। जिनके पास जाने को रुपया है वे इतनी वाकफीयत नहीं रखते कि वहां तक आसानी से पहुंच सकें। ग़रीब विद्यार्थी बेचारे सोच में पड़े पड़े ही रोते रहते हैं। धन के चाहने वाले जानते ही नहीं कि किस तरह अमरीका उनको फलदायी हो सकता है।

ऐसे भाइयों की सेवा के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। इसमें मैंने पहिले अपनी राम कहानी लिख कर यह बतलाया है कि मैं किस प्रकार अमरीका पहुंचा—मुझ पर क्या क्या बीती—इससे कुछ तो लाभ अवश्य होगा। इसके बाद मैंने अमरीका के सम्बन्ध में पूरी पूरी सूचनाएँ प्रश्नोत्तर के तरज़ पर लिखी हैं, जिनमें सविस्तर सब बातों का पता दिया गया है। इस पुस्तक को यथाशक्ति लाभकारी बनाने की कोशिश की गई है। आशा है कि मेरे देशबन्धु इसको पढ़कर लाभ उठाने की चेष्टा करेंगे।

काशी,
२० अगस्त १९११

विनीत—
सत्यदेव।

समर्पण

यह छोटी सी पुस्तक मैं बड़े प्रेम से अपने
परम प्रिय देशबन्धु

श्रीयुत ज्येष्ठालालजी

बम्बई निवासी के कर-कमलों में भेंट करता
हूं। जिस उदारता से आपने मेरी अम-
रीका जाते समय सहायता की थी
उसे मैं आजन्म स्मरण
रक्खूँगा।

——सत्यदेव

तृतीय संस्करण की भूमिका

'अमरीका-पथ-प्रदर्शक' सन् १९११ में पहली बार छपा, इसकी दो हज़ार प्रतियाँ हाथों हाथ उड़ गईं। इसके १९१२ में इसकी दो हज़ार प्रतियाँ फिर छपवाई गईं। वह संस्करण बड़ा भद्दा और ख़राब छपा था इसलिए उ प्रचार कम हुआ। १९१३ में मैंने सत्य-ग्रन्थ-माला को दूस हाथों में दे दिया था, इस लिए इस पुस्तक का तीसरा संस शीघ्र न छप सका। अब जब लड़ाई छिड़ गई तो काग़ भाव बहुत चढ़ गया, साथ ही बहुत सी जहाज़ों की कम्प के कारोबार बिगड़ गए और अमरीका के युद्ध में सम्मि होने के कारण अमरीका सम्बन्धी कुछ बातों में फेरफा हो गया, इसलिए विचार यह था कि युद्ध के बाद इ अच्छा संस्करण बढ़ा कर छापा जाय, पर पुस्तक-प्रेमी कब लेने देते हैं। उनके आग्रहवश थोड़ी सी कापियाँ केवल को पूरा करने के लिए छपवा दी गई हैं। काग़ज़ की महं दाम बढ़ा दिया गया है। आशा है कि "अमरीका-पथ-प्रद के प्रेमी इसक लिए हमें क्षमा करेंगे।

—प्रकाश

राष्ट्रीय साहित्य ! राष्ट्रीय विचार !!

सत्य-ग्रन्थ-माला

स्वामी सत्यदेव जी रचित "सत्य-ग्रन्थ-माला" की पुस्तकें देश की क्या सेवा कर रही हैं—इसको हिन्दी संसार अच्छी तरह जानता है। प्रत्येक भारतीय को इन ग्रन्थ-रत्नों का प्रचार बढ़ाना चाहिए। ग्रन्थों का नाम सुनिए—

१—**अमरीका-पथ-प्रदर्शक**—(तृतीयावृत्ति) सुन्दर टाइप। दाम सात आने।

२—**आश्चर्यजनक-घंटी**—नया संस्करण हुआ है। दाम पांच आने।

३—**अमरीका-दिग्दर्शन**—अमरीका की स्वतन्त्रता का आनन्द चखाता है। द्वितीयावृत्ति। दाम बारह आने।

४—**अमरीका के विद्यार्थी**—तृतीयावृत्ति; शुद्ध संस्करण; नया ढंग देखिए। दाम चार आने।

५—**अमरीका-भ्रमण**—द्वितीयावृत्ति; सुन्दर संस्करण। दाम आठ आने।

६—**मनुष्य के अधिकार**—तृतीयावृत्ति; शुद्ध संस्करण। अपने अधिकारों को जानिए। दाम सात आने।

७—**राजर्षि भीष्म**—नया संस्करण; आदर्श जीवन। पढ़ने योग्य। दाम चार आने।

८—**सत्य-निबन्धावली**—द्वितीय संस्करण। सुन्दर टाइप; शिक्षाप्रद निबन्ध हैं। दाम आठ आने।

९-कैलाश-यात्रा—मानसरोवर स्नान कीजिए। दाम आठ आने।

१०-शिक्षा का आदर्श—घर घर प्रचार करने लायक है। द्वितीयावृत्ति। दाम पांच आने।

११-लेखन-कला—लेखक बनिए। अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। दाम नौ आने।

१२-हिन्दी का सन्देश—बारह हज़ार छप चुका है। पांचवीं आवृत्ति। दाम एक आना।

१३-जातीय-शिक्षा—दस हज़ार छपी है। तृतीयावृत्ति। दाम एक आना।

१४-राष्ट्रीय-संध्या—बाइस हज़ार छप चुकी है। चतुर्थावृत्ति। दाम दो पैसे।

१५-वेदान्त का विजय-मन्त्र—जीवन डालता है। मुर्दों को उठाता है। दाम डेढ़ आना।

१६-संजीवनी-बूटी—वीर्य्य रक्षा सम्बन्धी सब बातें सविस्तर इसमें हैं। दाम नौ आने।

ये सोलह पुस्तकें स्वामी जी की रचित हैं। इसके अतिरिक्त स्वामी रामतीर्थ जी का "राष्ट्रीय-सन्देश" भी हमारे यहां मिलता है। दाम छः आने। कृपा कर इन पुस्तकों का प्रचार कर मातृभूमि की सेवा कीजिए।

निवेदक—

मेनेजर, सत्य-ग्रन्थ-माला आफ़िस, इलाहाबाद।

अमरीका-पथ-प्रदर्शक

मैं कैसे अमरीका पहुंचा

सन् १९०४ के अन्त में मेरी इच्छा अमरीका जाने की हुई। यूं तो इससे कई वर्ष पहिले मेरे दिल में नई दुनिया घूमने का विचार हो रहा था, मगर कभी उस पर दृढ़ संकल्प नहीं किया था। परन्तु जब मैंने अपने कई एक अमरीका प्रवासी भाइयों की चिट्ठियां अखबारों में पढ़ीं और उनके उत्तेजना पूर्ण लेख पत्रों में देखे तो मैंने अपने इरादे को मज़बूत कर लिया। मुझे अमरीका की धुन लगी।

नवम्बर के महीने में लाहौर में उत्सवों की धूम रहती है। अपने कई एक काशी निवासी मित्रों के साथ मैंने भी वहां जाने की ठानी। क्योंकि मेरी जन्मभूमि पंजाब में है और पिता भाई वहीं रहते हैं, इसलिए उनसे जाती भेंट करना उचित समझा। जब मैं लाहौर गया और अपने भाई बहिनों से इस बात का चर्चा किया तो वे सब मेरी मसखरी उड़ाने लगे। वे मुझे शेख़चिल्ली (Dreamy) समझते थे। वे कहते थे कि धन के बिना अमरीका जाना असंभव है और मेरे पास, बस, पंद्रह रुपये से अधिक धन नहीं था।

जब पिता जी ने मेरी बातें सुनीं तो और भी तमाशा हुआ। पिता जी ने मुझे बहुत समझाया—"ऐसी मूर्खता मत करो;

तुमको बड़ी तकलीफ़ होगी"—मगर मेरे शिर पर तो अमरीका का भूत सवार हो चुका था, और मैंने प्रण कर लिया था कि चाहे प्राण चले जांय पर अमरीका ज़रूर पहुँचूंगा। अपने मित्र दोस्तों से भी मिला, उनसे भी अपने दिल की बात कही। वे बेचारे क्या मदद कर सकते थे, हां उन्होंने मुझे उत्साहित अवश्य कर दिया।

खैर, अपने घर वालों से मिल मिला कर मैं काशी लौटा और अमरीका की धुन में दिन व्यतीत करने लगा। जहां से कुछ भी उसकी वाकफीयत मिलती, फौरन उसको अपनी डायरी में नोट कर लेता। अमरीका का इतिहास पढ़ा। उसके रास्ते की टटोल अटलस द्वारा की। जहां तक हो सका मसाला जमा किया और आखिर पहिली जनवरी १६०५ को काशी छोड़ना निश्चित कर ही डाला।

मेरे पास कुल जमा पंद्रह रुपए थे। यही मेरी पूंजी थी। मगर एक बात सब से बढ़ कर जो थी वह दृढ़ प्रण था। ईश्वर पर भरोसा करके मैंने अपने प्रण को आरंभ किया, और प्रथम जनवरी, प्रातःकाल की गाड़ी से काशी से चुपचाप प्रस्थान किया। जो भाव मेरे हृदय में काशी को अन्तिम प्रणाम करते समय पैदा हुए थे उनका वर्णन करना कठिन है। जब गाड़ी डफरिन ब्रिज से होकर चली और मैंने काशी का प्रभाती दृश्य देखा तो मेरी आंखों में आंसू भर आये और मेरे मुँह से बेइख़्त्यार यह निकला—

खुश रहो अहले वतन अब हम सफर करते हैं।
दरो दीवार पै हसरत से नज़र करते हैं॥

इस प्रकार आहें भरता मैं काशी से जुदा हुआ। इलाहा-

बाद से जबलपुर और जबलपुर से बम्बई पहुंचा और वहां आर्य्य-समाज में जाकर ठहरा। मेरे मित्र सोमदेव जी भी इसी धुन में इधर आए हुए थे। उनसे भेंट हुई और हम दोनों अने काल चक्कर में धस पड़े। घूमना ही दिन भर हमारा काम था। बम्बई बंदरगाह पर जहां जहाज़ आकर ठहरते हैं वहां हम दोनों रोज़ जाते और अपनी क़िस्मत का तराज़ू तोलते, लेकिन वह सदा हलका ही निकलता था। जहाज़ पर नौकरी न मिली; क्योंकि वहां अच्छे तजरुबेकार मल्लाहों की ज़रूरत थी। हमारे जैसे नन्हों को कौन पूछता था। इस तरह बहुत दिन हमारे ख़राब हो गए और हम निराशा की सीमा तक पहुंच गए।

सोमदेव बेचारे ने तो निराशा देवी के सामने सिर झुका दिया, मगर मैंने हिम्मत न हारी। मैंने विचारा कि पहिले कुछ दिन घूम फिर कर देश की सेवा करनी चाहिए, शायद इस बीच में कोई तरीका मनोरथ-सिद्धि का निकल आवे और अपना काम बन जाय, और हुआ भी ऐसा ही। चार महीने मैंने गुजरात काठियावाड़ में भ्रमण किया। यथाशक्ति काम करता रहा। अंत को एक दो सज्जनों ने मेरे साथ कुछ सहानुभूति प्रगट की। उनका मैं सारी उम्र कृतज्ञ रहूंगा। ख़ास कर कच्छ निवासी श्रीमान् ज्येष्ठालालजी का, जिन्हों ने अपनी उदारता का अच्छा परिचय दिया।

परन्तु इतना होने पर भी मेरे पास अमरीका जाने योग्य धन नहीं था। दरयाफ़्त करने पर पता लगा कि अमरीका पहुंचने के लिए कम से कम पांच सौ रुपया चाहिए और मेरे पास तीन सौ भी नहीं थे। मैंने सोचा कि न्यूयार्क की ओर से जाने की अपेक्षा हांगकांग की ओर से जाना ठीक होगा। क्योंकि उधर रुपया कमाने के मौके मिलेंगे। धीरे धीरे काम

करते करते रुपया हो जाने पर अमरीका जा सकूंगा। इसी विचार से मैंने बम्बई से कलकत्ता प्रस्थान किया और उधर से जापान होकर अमरीका जाने की ठानी।

कलकत्ता पहुंचने पर एक और भारतीय विद्यार्थी के साथ मेरा संग हो गया। वे भी अमरीका जाने वाले थे और उनके पास जाने लायक रुपया भी था। हम लोगों ने इकट्ठे ही सब सामान ख़रीदा। मेरे पास तीन कम्बल थे, एक बड़ा लम्बा ओवरकोट मैंने सिलवाया, एक काली बानात का सूट भी तैयार करवा लिया। मेरे पास एक बड़ा सन्दूक पुस्तकों का था वह भी मैंने साथ ले जाना चाहा। लेकिन बाद में कुछ सोच विचार कर उसे अपने मित्र के पास रख दिया। बहुत अच्छा होता यदि मैं अपनी किताबें बिलकुल ही न ले जाता। मुझे बाद में पुस्तकों तथा दूसरे असबाब के कारण बड़ी ही तकलीफ़ हुई। अमरीका की ओर जाने वालों के पास जितना थोड़ा असबाब हो उतना ही अच्छा है। अधिक कपड़ा ले जाने की ज़रूरत नहीं, केवल एक गरम सूट काफी है; बाकी वहां जाकर प्रबन्ध कर लिया जाता है। हां, एक काला सूट अवश्य ही चाहिए; क्योंकि काले कपड़े के पहरने का अमरीका में बड़ा रिवाज है।

आठ मई को जहाज़ में जाना था और हम लोग सुबह से ही अपने बोरिये बिस्तरे सम्भाल कलकत्ता घाट (Wharf) पर चले गए। वहां एक अजीब दृश्य देखने में आया। चार पांच सौ सिक्ख अपनी अपनी गठरियां बांधे दरिया के किनारे बैठे बोलियां गा रहे थे और ऐसे खुश थे कि जैसे किसी विवाह [illegible] जा रहे हैं। हम लोगों ने जाकर पहिले डाक्टरी के विषय [illegible] किया तो मालूम हुआ कि डाक्टरी के नियम बड़े

चढ़े हैं—सन्दूकों के सारे कपड़े निकलवा कर उनको "स्टीम-स्नान" कराना पड़ेगा। जब मैंने अपने मित्र से इस विषय में सलाह की तो उन्होंने यही बेहतर समझा कि सेकण्ड क्लास का टिकट पीनांग तक खरीदा जाय और एक बंगाली डाक्टर ने भी यही राय दी। मेरे मित्र फौरन ही आपकार कम्पनी के दफ़्तर में पहुंचे और सेकण्ड क्लास का टिकट खरीद कर वापिस चले आए। अब डाक्टरी वाली नबज़ देखने तक की ही रह गई और हमने अपना सारा असबाब किश्तियों पर लदवा जहाज़ पर भेज दिया। मेरे मित्र तो असबाब भेजने के काम में लगे थे और मैं घाट पर खड़ा कुछ सोच रहा था-"हा! अब भारत से जाना होगा। न जाने बाहर जाकर क्या दशा हो। एक बालक की भांति चित्त अधीर हो गया; परंतु जब मैंने उन सिक्खों को देखा और उनकी दशा पर विचार किया तो मुझे अपनी कायरता पर बड़ी लज्जा आई। आंखों से आंसू पोंछ मैंने धीरज धरा। इतने में मेरे मित्र भी आगये थे; और हम दोनों किश्ती पर बैठ जहाज़ की ओर चले। जहाज़ के कप्तान ने हमारे साथ और भी दुष्टता की। उसने हम लोगों को एक अंधेरी कोठरी में डाल दिया; जहां न वायु था और न प्रकाश। जब हम लोगों ने शिकायत की तो आप फरमाते क्या हैं-"हमारे और कोई कोठरी खाली नहीं, आपको इसी में गुज़ारा करना पड़ेगा"-हालां कि उसने दो तीन ऐसे अंगरेज़ों को जिन्होंने डेक का टिकट लिया हुआ था दूसरे दर्जे के अच्छे कमरे में जगह दे दी थी। ख़ैर, लाचारी थी; हम क्या कर सकते थे।

अब यात्रा का हाल सुनिए। पहिली रात तो हमारी बड़े ही कष्ट में गुज़री। सारी रात बैठ कर काटी। क्योंकि इन दिनों गर्मी सख़्त पड़ रही थी और अभी हम लोगों को एक दो दिन

हुगलीमें लगने थे। जब हुगली दरिया से निकल, बंगाल की खाड़ी में पहुंचे तो समुद्र देवता ने अपना रूप दिखाना आरम्भ किया। क्योंकि यह मौसम समुद्रके यौवन का होता है। जहाज़ डोलना आरम्भ हुआ। बड़ी बड़ी लहरें उठ कर यात्रियों से हाथ मिलाने दौड़ती थीं और केवल हाथ मिलाना ही क्या, बल्कि उनको प्रेम का पूरा स्नान कराती थीं। हमारी तो खैर, हम तो ऊपर दूसरे दर्जे के डेक पर थे; परंतु उन बेचारे सिक्खों पर आफत ही आ गई। उनके सारे कपड़े भीग गए थे, उनका आटा दाना पानी से तर हो गया था, न दिन को आराम, और न रात को नींद, बेचारे अधमुए से पड़े थे। मेरे साथी ने भी चार दिन तक खाना नहीं खाया और क़रीब क़रीब मुर्दे के समान पड़ा रहा। मैं अपने साथ कुछ नमकीन चीज़ें तथा कुछ निम्बु लाया था इससे मुझे बहुत ही लाभ पहुंचा। क्योंकि जब समुद्र क्षुभित हो और जी मिचलाने लगे तो नमकीन वस्तु खाने से अथवा निम्बु चाट लेने से मिचलांई दूर हो जाती है। मैं बराबर काम करता था और अपने मित्र की सेवा सुश्रूषा में भी लगा रहता था। चार पांच दिन के बाद समुद्र देवता ने शान्त रूप धारण किया और हम लोग पीनाङ्ग की खाड़ी के निकट पहुंच गए। अब जहाज़ के सफर का आनन्द आने लगा; क्योंकि समुद्र पर यह छोटा सा स्टीमर ऐसे आनन्द से जा रहा था जैसे बत्तख़ पानी पर तैर रही हो; और संध्या के समय जब सूर्यदेव अस्ताचल पर पहुंचते तो दृश्य बड़ा ही मनोहर हो जाता था सुनहरी किरणें पानी पर पड़ कर भांति भांति के रंग धारण करती थीं। हमको ऐसा आनन्द आया कि पिछले चार दिनों का दुःख भूल गए और हम लोग सारा दिन डेक पर बैठे या तो कोई पुस्तक पढ़ा करते या ताश खेला करते थे। एक

दिन दुपहर को मैं अपने सिक्ख भाइयों को देखने गया, वे भी अपने आनन्द में मस्त पिछले कष्ट को भूल सा गए थे। मगर उनको बड़ी भारी तकलीफ़ यह थी कि वे भेड़ बकरियों की तरह डेक पर खचाखच भर दिए गये थे और साथ ही मल्लाह लोग उनके साथ बड़ा बुरा सलूक करते थे। इन सबसे बढ़ कर एक भारी तकलीफ उनको यह थी कि भेड़ों की लीद से उठी हुई दुर्गंध उनकी नाक में दम किए देती थी। लेकिन बेचारे करते तो क्या करते। एक तो उनका सारा सामान ख़राब हो गया था। कई एक चीज़ें समुद्र में बह गई थीं, बहुतों के कपड़े अब तक गीले थे। हां, जिनके पास झुलई शय्या (Hammock) थी उनको बहुत कुछ आराम मिला। वे तो सो भी सकते थे। इसलिए डेक पर सफर करने वालों को एक झुलई शय्या अपने पास अवश्य ही रखनी चाहिए। इससे सफर करने में बड़ा सुभीता होता है। जहाज़ पर मांगने से कोई चीज़ नहीं मिलती। अपनी चीज़ हो तभी गुज़ारा हो सकता है।

आखिर गिरते पड़ते, साथ साथ आनन्द भी लूटते, हम लोग पीनांग पहुँच गये। स्टीमर प्रातःकाल पीनाङ्ग के निकट पहुँचा। आज आकाश स्वच्छ था। प्रभाती दृश्य मनोहर था। स्टीमर बन्दरगाह से इस तरफ कुछ फासले पर खड़ा होगया और पीनाङ्ग उतरने वाले यात्रियों को लेने के लिए छोटी छोटी डोंगियां आने लगीं। हम लोग तो आगे ही से तैयार बैठे थे। नौकरों को कुछ दे दिला अपने काम से फारिग हो हमने भी एक डोङ्गी में अपना असबाब लदवाया और डोंगी किनारे चली।

पीनांग स्ट्रेट सैटलमेन्ट का बड़ा ही खूबसूरत शहर है। अपने ढङ्ग का यह नया ही शहर देखने में आया। हमने तो पहले कभी ऐसा शहर नहीं देखा था। सुन्दर साफ गलियां और

उन पर जिनरिक्षा दौड़ते हुए बड़े ही भले दीख पड़ते थे। हम लोगों ने पहिले कभी जिनरिक्षा की सवारी नहीं देखी थी। इसलिए स्वाभाविक ही इन पर चढ़ने को दिल करता था। एक जिन-रिक्षा मैंने पकड़ा और एक मेरे मित्र ने। अपना अपना असबाब उसमें रख हम लोग चले। यह भी खूब सवारी थी। एक लम्बी चोन्दी वाले चीनी का रिक्षा को खेंचकर भागना बड़ा ही अजीब मालूम होता था। अपने देश में तो किरानी औरतों या मेमों की गाड़ियों को खेंचने वाले अपने भारतीय बन्धु बहुत देखने में आए थे। लेकिन उनको देख कर कभी भी अपने दिल में उनके दया का भाव उत्पन्न नहीं हुआ था। हम लोगों ने तो अपने देशीय बन्धुओं की दुर्दशा को एक साधारण बात समझ रखा है, और अपने को बड़ा जान दूसरों की भलाई का ख्याल मन में लाना होही नहीं सकता। क्यों न हो, तभी तो ऐसी दुर्दशा है।

चलिये पाठक! हम आपको पीनाङ्ग की गलियों की ओर लेचलें, और जिनरिक्षा की सैर करावें। इस प्रकार घूमते घामते पीनाङ्ग के बाज़ारों का आनन्द लेते हम लोग सिक्खों के गुरु-द्वारे की ओर चले। रास्ते में जगह जगह पर सिक्ख सिपाही देखने में आए। इनके लम्बे लम्बे कद, बड़ी बड़ी दाढ़ियां भारत भूमिके गौरव को बढ़ाने वाली थीं; परन्तु इसके साथ ही यह भाव भी उदय होने लगते थे कि भारतमाता के ये सपूत यहां खड़े क्या कर रहे हैं। इन भावों का उदय होना चित्त को दुःखित करता था। परन्तु भावी बड़ी ही प्रबल है। मनुष्य जो चाहे वह कैसे हो सकता है जब कि होने वाले कार्य्य का सम्बन्ध जाति समुदाय के साथ हो।

अब हम सिक्ख मन्दिर में पहुँच गये। पीनाङ्ग का यह सिक्खों की भक्ति का सचमुच एक जीता जागता उदा-

हरण है। जो लोग भारत से इधर आते हैं, जिनको नौकरी की तलाश होती है, या जिनकी नौकरी छूट जाती है वे सब इसी जगह विश्राम लेते हैं। अच्छा पक्का स्थान, मज़बूत फ़र्श, बड़े बड़े दालान, मुसाफ़िरों के आराम करने के लिए बड़े ही काम के बने हैं। यहां के ग्रन्थी महाशय बड़े सज्जन पुरुष थे। हम लोगों को उन्होंने बड़ी अच्छी तरह टिकाया और खाने पीने का बन्दोबस्त कर दिया। तीन चार रोज़ हम यहां रहे। मेरे मित्र के पास तो जाने के लिए काफ़ी रुपया था, इसलिए उन्होंने सिंगापुर आने वाले जहाज़ का टिकट ख़रीद लिया और मुझको छोड़ चलते बने। मैंने कहा, "अच्छा, आप ने छोड़ दिया तो क्या हुआ, ईश्वर तो नहीं छोड़ेगा" और अपनी धुन में लग गया। एक पंजाबी मित्र ने मेरी सहायता करने का वचन दिया था, इसलिए मैं उनके साथ ईपू की तरफ़ चला गया। उधर भी अपने बहुत से आदमी हैं। अधिकांश तो सिक्ख लोग ही हैं, जो या तो फ़ौज में भरती हैं या चाचमैनी के काम में फंसे हैं। उनके अतिरिक्त कुछ और भारतीय जन मेहनत और मज़दूरी द्वारा रुपया कमाते हैं। ये द्वीप अंगरेज़ों के अधीन हैं, और यहां के असली निवासी मलाई कहलाते हैं। वे अधिकतर मुसलमान हैं और अपने दीन के बहुत ही पक्के हैं, परन्तु ऐसे परिश्रमी नहीं जैसे कि पंजाब के निवासी। यही कारण है कि उनके कारोबार दूसरी क़ौमों के हाथों में जा रहे हैं। इन द्वीपों में चीनी भी बहुत हैं और दक्षिण भारत के कलिंग लोग भी यहां बसे हैं। कलिंग शब्द अंगरेज़ी Killing का अपभ्रंश है। दक्षिण भारत के जिन लोगों को मार डालने के अपराध में देश-निकाले की सज़ा मिलती थी वे यहीं पर भेज दिए जाते थे। दन्त कथा है कि जब किसी

मलाई ने किसी गोरे से इन भारतीय अपराधियों के विषय में पूछा तो उसने जवाब दिया "They Killing men"। इसी से इनका नाम किलिंग पड़ गया। ये लोग पीनांग में अधिकतर हैं और यहां पर उनका एक मंदिर भी है, जिसमें ये लोग अपना पूजा-पाठ करते हैं।

अपने मित्र के साथ मैं ईपू की ओर गया तो, परन्तु कुछ वहां विशेष लाभ नहीं हुआ। हां, इधर उधर घूम कर भारतीय बन्धुओं की दशा देखने का अच्छा अवसर मिला। उनमें बहुत से तो फौज़ में भरती हैं। जिनमें सिक्खों की संख्या अधिक हैं। कुछ लोग गैया ख़रीद कर दूध का व्यापार करते हैं और कई एक ने दुकानें रखी हैं। ग़रज़ के भारतीय बन्धुओं का परिश्रम यहां पर उनके लिए अति फलदायक है। आबहवा यहां की अति उत्तम है। रेल में बैठे बैठे जंगलों और पहाड़ों के दृश्य मैंने देखे। उनको देख चित्त अति प्रसन्न हुआ। ईपू से लौट कर जब मैं अपने मित्र के गाओं की ओर आया तो वहां एक सिक्ख विद्यार्थी से मेरी भेंट हुई। वह भी अमरीका जाना चाहता था। इनका नाम श्रीमान् पालासिंह है। अपने भाई से काफी रुपया ले ये भी मेरे साथ पीनांग चले आये, और अब हम फिर दो जने हो गये। पीनांग से सिंगापुर तक जिस टिकट की क़ीमत स्टीमर कम्पनी वाले बारह डालर मांगते थे वह हमको चीनी सौदागरों के हाथ ४॥) डालर पर ही मिल गया। जो लोग इस ओर सफर करना चाहते हैं उनको यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि इधर स्टीमरों के टिकट एक भाव पर नहीं बिकते, इसलिए खूब सोच समझ कर अच्छी तरह दरयाप्त करके टिकट ख़रीदना चाहिए।

ख़ैर, हम लोग नियत दिन सिंगापुर की ओर रवाना हुए।

इस स्टीमर पर चीनियों की भरमार थी। इनकी लम्बी लम्बी चोटियां, गंदे कपड़े, यात्री के दिल में उनके प्रति घृणा उत्पन्न करते थे। खाने की बाबत तो क्या कहना। मालूम होता है कि ईश्वर रचित कोई भी प्राणी ये लोग नहीं छोड़ते। कीड़े, मकोड़े, मेंढक, साँप, कुत्ते, बिल्ली, सभी कुछ ये लोग चट कर जाते हैं और इन जानवरों को ऐसा सड़ा सड़ा कर ये लोग खाते हैं कि देखने वाला हैरान हो जाता है। हम लोगों ने चार दिन बड़ी विपत से काटे; क्योंकि अब तो मैं भी "डेक" मुसाफिर था और हमारे साथ जितने भारतीय यात्री थे उन बेचारों ने भी अति कष्ट सहन किया। सचमुच यह नर्क की यात्रा है; और मैं अपने पाठकों से सविनय निवेदन करूंगा कि वे, जहां तक हो सके, अंग्रेज़ी जहाज़ों से बचें। जर्मन और जापानी स्टीमर इतने ख़राब नहीं होते। इनमें डेक के मुसाफिरों की भी अच्छी ख़बरदारी की जाती है।

आख़िर सिंगापुर आया। हम लोग गुरुद्वारे में पहुंचे। मगर वहां पता लगा कि एक भारतीय सज्जन अपने कुटुम्ब सहित पास ही के मकान में रहते हैं। हमने उन्हीं के यहां जाना उचित समझा। उनके यहां जाने से हमको बड़ा आनन्द मिला। उन्होंने बड़े प्रेम से अपने घर में जगह दी। एक सप्ताह भर हम उनके यहां रहे और इसके बाद हमने हांगकांग की तैयारी की।

यहां पर यह बतलाना अनुचित न होगा कि इस पंजाबी सज्जन ने कई एक भारतीय बन्धुओं द्वारा मेरे साथ सहानुभूति करने का पूरा प्रयत्न किया और मैंने वहां दो तीन व्याख्यान भी दिए, जो लोगों को बहुत पसन्द आए। यहां से हमने अपनी लम्बी यात्रा के वास्ते, कई एक छोटी छोटी चीज़ें

भी ख़रीद कीं; जैसे बाल साफ करने की कंघी, ब्रश, टुथब्रश, उस्तरा, साबुन तथा और नित्य के काम की चीज़ें । जिस दिन हमको जाना था उससे एक रोज़ पहिले हम लोग सिंगापुर घाट पर गए, जहां बहुत से जहाज़ देखने में आये; क्योंकि सिंगापुर एक बड़ा भारी बंदरगाह है । छोटा सा यह द्वीप—चीन जापान एक ओर, भारत दूसरी ओर—इन देशों के बीच में नाका डाले हुए है । इसी लिए संसार की सब जातियों के स्टीमर यहां आकर ठहरते हैं और सिंगापुर इसी कारण से एक अच्छा सर्वमिश्रित Cosmopolitan शहर हो गया है । हम लोगों ने इस बार जर्मन कम्पनी का टिकट ख़रीदा था; इसलिए सिंगापुर से हांगकांग जाने में हमें कुछ भी कष्ट नहीं हुआ । हां, इतना अवश्य है कि चीनी भुतने इस जहाज़ पर भी थे और एक बार मेरी उनसे खटपट भी होने लगी थी । बात यह हुई कि जहां मैंने बिस्तरा किया हुआ था वहां पर आकर पांच चार चीनी मज़दूर अपनी गुड़गुड़ियां ले अफीम पीने लगे । उनकी दुर्गन्धि से मेरा सिर घूमने लगा । मैंने इनको समझाया कि तुम लोग यहां से उठ कर दूसरी तरफ चले जाओ । बजाय इसके कि वे मेरा कहा मानते, वे अपनी भाषा में "घांघां" करने लगे और जैसे एक कौवे की कांव कांव से बहुत से इर्द गिर्द के कौवे इकट्ठे हो जाते हैं, इसी प्रकार इर्द गिर्द के सारे चीनी मज़दूर वहां आकर इकट्ठे हो गए । मेरे दिल में तो पहिले यह आया कि पांच चार की चोटियां पकड़ इनको खूब पीटूं; परन्तु मेरे मित्र पालासिंह ने इसका विरोध किया । फिर मैंने यही मुनासिब समझा कि कप्तान के पास जाकर इसका निपटेरा करना चाहिए । उनमें से एक चीनी अंग्रेज़ी जानता था । जब उसको मेरे इरादे का पता

लगा तो वे सब उठ कर वहां से चले गए और मैंने अपने विस्तरे को ठीक करके सोने की तैयारी की।

सिंगापुर से हांगकांग जाने में छः रोज़ लगते हैं और यह चीनी समुद्र बड़ा ही दुलैया है। भारी भारी तूफान इस समुद्र में आते हैं। ईश्वर की बड़ी कृपा हुई कि हम लोग बिना किसी "डामाडोल" के हांगकांग पहुँच गए और रास्ते में किसी प्रकार का क्षोभ नहीं हुआ।

आइये पाठक, हम आपको हांगकांग की खाड़ी का दृश्य दिखावें। यह दृश्य सचमुच देखने योग्य है। एक पहाड़ी के ऊपर हांगकांग शहर बसा हुआ है और अर्धचन्द्राकार खाड़ी इसके सौन्दर्य्य को चौगुना कर देती है। छोटी छोटी डोंगियां, बड़े बड़े जहाज़, चीनी डोंगे, इधर उधर घूमते फिरते बड़े ही भले दीख पड़ते हैं। शहर से दूसरी ओर खाड़ी पार जाने के लिए छोटे छोटे स्टीमर सदा चलते रहते हैं, जिन पर मज़दूर और नौकरी पेशा लोग आते जाते हैं।

जिस समय हमारा जहाज़ इस खाड़ी में जाकर पहुँचा और मैंने इधर उधर निगाह दौड़ाई, हांगकांग के सुन्दर भवन देखे और अर्धचन्द्राकार मकानों का दृश्य देखने में आया तो मुझे पुनः काशी की याद आई। पुण्या जान्हवी को दिल ही दिल में नमस्कार कर हम लोग उतरने के लिए तैयार हो बैठे। जिस समय डोंगी वाले जहाज़ पर आए तो हमने भी एक ही साथ किराया ठीक किया और हांगकांग पहुँचे। स्मरण रहे कि यहां का सिक्का और ही तरह का होता है। सिंगापुर और मलाई डालर यहां नहीं चलते। डोंगी वाले बड़ा तंग करते हैं। डोंगी से उतर अपना असबाब एक गाड़ी में लदवा हम लोग सिक्ख गुरुद्वारे की ओर चले। ये गुरुद्वारे निर्धन

भारतीय यात्रियों के लिए सचमुच बड़े ही लाभदायक हैं, नहीं तो नावाकिफ आदमी यहां किसी के चंगुल में फँस कर यूंही लुटा जाय। गुरुद्वारे में पहुँच हम लोगों ने अपने डेरे डंडे लगा दिये और धर्मशाला के ग्रन्थी ने हमारे साथ बहुत अच्छा बर्ताव किया। यहां आकर मुझे पता लगा कि जो मित्र मेरे साथ कलकत्ते से आया था वह अभी यहीं है। वह अमेरिका नहीं गया था; क्योंकि कई एक दैवी बाधाओं के कारण वह भी यहीं रुक गया था। पांच चार रोज़ हम लोग गुरुद्वारे में ठहरे और इसी बीच में कई एक और भारतीय अमरीका जाने की धुन में यहां पहुंच गये। अब तो अमरीका जाने वालों की एक ख़ासी मण्डली हो गई। श्रीमान् पालासिंह और मेरे मित्र रवि तथा दूसरे भारतीय लोग अमरीका जाने को उद्यत हो गये, और उन्होंने अपना अपना टिकट ख़रीद सब तैयारियां करलीं। मैं ग़रीब फिर भी रह ही गया; क्योंकि मेरे पास जाने लायक़ रुपया नहीं था। जिस रोज़ ये सब मित्र जहाज़ में चढ़ हांगकांग से चले, उस दिन मैं अधीर सा हो अपने कमरे में पड़ा रहा। कभी कुछ सोचता था कभी कुछ। कोई बात समझ में नहीं आती थी। पहले यह दिल में आया कि स्याम चलना चाहिए; वहां कुछ रुपया कमा फिर अमरीका जावेंगे। स्याम जाने के लिए टिकट ख़रीदने मैं टिकट घर में भी गया; परन्तु किसी कारणवश उस दिन उधर के टिकट ही नहीं बटते थे। इस प्रकार की उधेड़बुन में मेरे कई एक दिन यहां पर लग गये। आख़िर फैसला किया कि मनीला चलना चाहिये; क्योंकि मनीला जाने तक का किराया मेरे पास मौजूद था। यदि न भी होता तो भी हांगकांग के दो एक मित्र इतनी सहायता करने को तैयार थे।

मनीला फिलीपाइन द्वीप की राजधानी है। यह द्वीप समूह अमरीका वालों के अधीन है। कुछ थोड़े ही वर्षों से ये द्वीप अमरीका वालों के हाथ आये थे। पहले यहां स्पेन वालों का राज्य था, परन्तु स्पेन वालों ने फिलीपीन लोगों पर बड़ा अत्याचार किया, इस कारण से फिलीपीनो लोग इनसे बड़े असन्तुष्ट थे। परन्तु विचारे क्या कर सकते थे, जब तक कि दैव ही उनकी सहायता न करता—और दैव ने सहायता की। अमरीका वालों का जहाज़ "मेन" स्पेन वालों की गफलत से समुद्र में डूब गया। इसी पर स्पेन और अमरीका में घोर युद्ध मचा। परिणाम यह हुआ कि फिलीपीनो लोग अमरीकन राज्य के अधीन हो गये। तब से इनका भी भाग्य जगा।

अब हम अपने पाठकों को मनीला ले चलते हैं। मनीला उतरने में मुझे कोई दिक्कत नहीं हुई। यद्यपि मेरी आंखें कमज़ोर हैं, परन्तु उनमें कोई बीमारी न होने से मुझे वहां उतरने में कोई रुकावट नहीं हुई, और मेरे पास दिखलाने के लिये काफी रुपया था। मनीला पहुंच कर मैंने एक नया ढङ्ग इख़्तयार किया। मनीला के अखबारों में धार्मिक विषयों पर लेख लिखने शुरू किये और धर्म के प्रचार का काम आरम्भ किया। पहले पांच चार महीने तो मुझे कुछ भी कामयाबी न हुई और मैंने इधर उधर नौकरी कर अपने दिन काटे। जो कुछ रुपया मेरे पास था वह सब खर्च हो गया और मुझे निर्धनता ने आ घेरा। लेकिन किये हुए कर्मों का फल अवश्य मिलता है। एक अमरीकन सज्जन ने अखबार में मेरे लेख पढ़ मुझको एक चिट्ठी लिखी और अपने पास आने की प्रार्थना की। मैं उन दिनों मनीला से उलंगापो काम की तलाश में गया हुआ था

३३६०

और वहां एक ठेकेदार के साथ साधारण मज़दूरी कर अपने दिन काट रहा था। जब अमरीकन सज्जन की चिट्ठी मेरे पास पहुंची तो मैंने मनीला लौटने की ठानी और वहां पहुंच उस अमरीकन सज्जन मिस्टर स्काट से भेंट की। मेरी मेहनत फल लाई और मिस्टर स्काट ने मुझे अपने पास संस्कृत पढ़ाने के लिये रख लिया और यह वायदा किया कि वे मुझे मनीला से शिकागो तक का टिकट ख़रीद देंगे। तीन महीने तक मैं इनके पास रहा और इनको कुछ व्याकरण तथा दो तीन उपनिषदें पढ़ाईं। ये दिन मेरे बड़े ही आनन्द से कटे; क्योंकि नित्यप्रति स्वाध्याय और शास्त्रों पर विचार करने से मन को अति शान्ति रही।

जब तीन महीने गुज़र गये तो मिस्टर स्काट ने मेरे लिए टिकट ख़रीद दिया और मैं मनीला से हांगकांग रवाना हुआ। अब क्यूंकि मैं मनीला से अमरीका जारहा था, इसलिए मुझे वही अधिकार प्राप्त थे जो एक फिलीपीनो को होते हैं। अब मुझे डाक्टरी आदि में कुछ तकलीफ़ नहीं हुई। जिस जहाज़ पर मैं वैंकोवर जा रहा था उस पर बहुत से पञ्जावी भाई भी थे।

यह जहाज़ केनेडियन पैसिफिक कम्पनी का था। इस पर बहुत से यात्री नई दुनियां की ओर जाने वाले थे। जिस दिन हम अपना असबाब ले जहाज़ पर चढ़ने के लिये हांगकांग वार्फ से चले, उस रोज़ बहुत से जहाज़ हांगकांग खाड़ी में आये हुए थे; क्योंकि हांगकांग भी एक बड़ा भारी बन्दरगाह है और अंगरेज़ों ने यहां पर बड़ी भारी छावनी बनाई हुई है। संसार की क़रीब क़रीब कुल जातियां यहां देखने में आती हैं और यह शहर भी वास्तविक देखने योग्य है। बिजली की

गाड़ियां यहां पर चलती हैं और एक सब से ऊंची पहाड़ी पर जाने के लिए भी गाड़ी का इन्तज़ाम किया गया है। यह गाड़ी पहाड़ी पर सीधी जाती है। बैठने वाले मुसाफिर को इन गाड़ियों में आनन्द भी आता है और कुछ कुछ डर भी लगता है। यह हक़ीकत में इन्जिनीयरिंग कौशल का बड़ा अच्छा नमूना है।

जिस समय हमारी किश्ती स्टीमर के निकट पहुंची और हम लोगों ने सीढ़ी द्वारा चढ़ना शुरू किया, तो मल्लाहों ने बदमाशी से हम लोगों के ऊपर जहाज़ की मोरी द्वारा पानी छोड़ दिया। उसी ख़राब पानी में भीगते भागते, लुड़कते, पुड़कते, हम लोग ऊपर जा पहुंचे, और अपने अपने सोने की जगह सम्भाली। हांगकांग से वैंकोवर जाने में २८ दिन के क़रीब लगते हैं, इसलिए जहाज़ वालों ने डेक मुसाफिरों के सोने के :वास्ते नीचे के भाग में लकड़ी के छोटे छोटे—एक आदमी के सोने लायक़—पटरे लगा दिये थे और ऐसा ही इन्तज़ाम क़रीब क़रीब दूसरे जहाज़ों में भी रहता है।

आख़िर हमारा जहाज़ हांगकांग से चला। शंघई तक तो मुसाफिरों की संख्या नहीं बढ़ी; परन्तु कोबे और योकोहामा में बहुत से जापानी मुसाफिर जहाज़ में आये। ये भी डेक-पैसिन्जर थे। मगर इनकी वरदियां बड़ी साफ सुथरी थीं। सिरों पर अमरीकन टोपियां पहिने ये लोग ख़ूब जेन्टिलमेन बने हुए थे। एक तो हमारे यहां के लोग, जो मैले कुचैले कपड़े पहिने नई दुनियां की ओर चले थे और दूसरी ओर ये जापानी मज़दूर अमरीकन फ़ैशन में सजे सजाये, साफ सुथरे बन, अमरीका में धन कमाने चले थे। इस मुक़ाबिले को देख मेरा चित्त बड़ा दुखी हुआ; क्योंकि जापानी मज़दूरों के सारे चिन्ह एक

उन्नत जाति के सदृश थे और ये लोग अपने शत्रुओं के भी प्रशंसा-पात्र बनने योग्य थे। इसके विपरीत हमारे मज़दूरों को देख घृणा उत्पन्न होती थी। क्यों न हो, इन्हीं कारणों से हमारी सब जगह बेइज़्ज़ती हुई है; क्योंकि तंगदिलों ने हमारे सब कामों में विघ्न डाल रक्खे हैं। यहीं इसी स्टीमर पर एशिया की तीन जातियां—भारत, चीन और जापान—के मज़दूर उपस्थित थे। एक विचारशील पुरुष के लिए यहीं पर काफी सामग्री इन देशों की अवस्था समझने के लिये मौजूद थी। भारतीय मज़दूरों को देख पता लगता था कि हमारी जाति संसार की सभ्य जातियों से कितना पीछे है। चालीस भारतीय मज़दूर अपना समय लड़ाई झगड़ों, शराब के पीने तथा दूसरी अण्डबण्ड बातों में काटते थे। आपस में एक दूसरे के साथ मेल नहीं था। जब दो तीन भारतीय मज़दूरों का कुछ चीनी मज़दूरों से झगड़ा हो गया और चीनियों ने उन भारतीय मज़दूरों को खूब पीटा तो दूसरे भारतीय मज़दूरों ने उनकी कुछ भी मदद नहीं की; उलटा बैठे तमाशा देखते रहे। चीनी मज़दूर अफ़ीम पीने में अधिक व्यस्त थे; परन्तु एक गुण इनमें बड़ा भारी यह था कि जब एक पर मुसीबत पड़ती थी तो झट सारे के सारे उसका साथ देने को तैयार हो जाते थे। जापानी मज़दूरों का तो कहना ही क्या है। इन लोगों के पास अंगरेज़ी सीखने की पुस्तकें मौजूद थीं और ये लोग अमरीका देश की भाषा सीखने में अपना समय काटते थे। इसके अतिरिक्त गित्यत्रनि या एक तंगा जिजित्सु आदि जापानी खेलें कर अपना दिल भी बहलाते थे। संख्या में जापानी मज़दूर सब से अधिक थे; परन्तु ये बड़ी शान्ति से प्रेम पूर्वक रहते थे। किसी प्रकार का झगड़ा नहीं करते थे।

जब कभी हमारे भारतीय मज़दूर शराब पीकर ऊधम मचाते तो वे सब लोग उनको देख बड़े हैरान होते थे। कई एक हमारे दुष्ट भाइयों ने कुछ जापानी महिलाओं को लज्जाजनक बातें भी कहीं, जिनको सुन कर मुझे अत्यन्त दुख हुआ और मैंने अपने लोगों को खूब ही फटकारा।

इस प्रकार हमारे दिन एक एक करके बीत गये। पैसिफ़िक महासागर इन दिनों बड़ा शांत होता है; इसलिए किसी प्रकार की आंधी या तूफ़ान नहीं आया। सारा महीना हमारा अच्छी तरह से बीत गया। जहाज़ भी बहुत ही बड़ा था। अतएव यदि किसी दिन हवा का वेग हुआ भी तो उसका अधिक असर हम लोगों पर नहीं पड़ता था। २८ मई को जहाज़ वैंकोवर जाकर लगा और डाकृरी में बहुत से आदमी घेरे गये; क्यों कि वहां पर अनपढ़ आदमियों को लूटने के कई एक ढंग बनाये हुए थे। मुझे तो किसी ने कुछ नहीं कहा और मैं बिना किसी रुकावट के जहाज़ से उतर कर शहर चला गया।

पाठक महाशय! बस इतनी ही संक्षेप में मेरी रामकहानी अमरीका जाने के सम्बन्ध में है। अधिक सूचनाएँ तथा अमरीका के हालात आपको आगे चल कर इस पुस्तक में मिलेंगे। इतना ही कह कर मैं यह रामकहानी समाप्त करता हूँ।

—सत्यदेव।

अमरीका-पथ-प्रदर्शक

प्रश्नोत्तर

प्रश्न १—अमरीका कहां पर है, और उधर जाने को रास्ता कहां से है?

उत्तर—नई दुनिया में युनाइटेड-स्टेट्ज़ नामी एक महान् देश है। इसका रक़्बा योरप के बराबर है और भारत से इसका क्षेत्रफल दुगना समझना चाहिए। इसी को अमरीका कहते हैं। यह देश नई दुनियाँ के उत्तरी भाग में है। इसके उत्तर में कनेडा, दक्षिण में मेक्सिको तथा अटलान्टिक, पूर्व में अटलान्टिक महासागर और पश्चिम में पेसिफिक महासागर तथा ब्रिटिश-कोलम्बिया है। इस देश को जाने के कई एक रास्ते हैं। परन्तु दो बड़े रास्ते हैं—एक तो कलकत्ते के रास्ते जापान होते हुए पेसिफिक महासागर द्वारा सनफ्रांसिस्को तथा सियेटल पहुँच सकते हैं; दूसरे बम्बई द्वारा योरप होते हुए अटलान्टिक महासागर से न्यूयार्क अथवा बोस्टन पहुँचते हैं। पहिला रास्ता यात्री को अमरीका के पश्चिमी भाग में ले जाता है और दूसरा अमरीका के पूर्वीय भाग में पहुँचा देता है।

इन दो रास्तों के अतिरिक्त और भी रास्ते अमरीका पहुँचने के हैं। बम्बई से जिनोआ (इटली) होते हुए फ्रांसीसी बन्दरगाह मारसलज़ जाकर वहां से अमरीका के दक्षिण भाग

में बन्दरगाह गालवस्टन पहुँच सकते हैं और वहां से उतर रेल द्वारा जा सकते हैं। मेक्सिको के किसी बन्दरगाह पर पहुँच वहां से रेल द्वारा युनाइटेड-स्टेटज़ में दाखिल हो सकते हैं। इस रास्ते जाने वाले, यदि निर्धन हों, तो वे मेक्सिको कुछ माह ठहर कर रुपया कमा फिर आगे जाने का इरादा करें। मेक्सिको एक बड़ा उपजाऊ देश है। यद्यपि वहां उतनी मज़दूरी नहीं मिलती, पर कुलीपन से फिर भी लाख दरजे अच्छा है। इस ओर जाने वाले बम्बई से जिनोआ जावें और वहां से मेक्सिको जाने वाली कम्पनियों के जहाज़ पर सवार हों। जिनोआ में किसी कम्पनी के दफ्तर से ये सब कुछ दरयाफ़्त कर सकते हैं।

प्र० २—इन दो प्रसिद्ध मार्गों की ओर जाने से रास्ते में कौन कौन बन्दरगाह पड़ते हैं और किन किन कम्पनियों से टिकट ख़रीदना चाहिए?

उ०—जापान की ओर से जाने वाले यात्री कलकत्ता से टिकट ख़रीदें; जहां तक हो सके अंगरेज़ी कम्पनियों से बचें। जर्मन, जापानी कम्पनियां सब से अच्छी हैं। जापानी कम्पनी 'निपन यूसेन कैसा Nipon Yusen Kaisha' के आफ़िस में जा वहां से टिकट ख़रीदें; या ऐसा करें कि कलकत्ता से हांगकांग चले जावें, वहां से किसी अमरीकन कम्पनी के जहाज़ पर सवार हों। इस रास्ते कलकत्ता, पीनांग, सिंगापुर, हांगकांग, शंघई, कोबे, योकोहामा, ये बंदरगाह आते हैं। यदि अमरीकन कम्पनी के जहाज़ पर जावें तो होनोलूलू बंदरगाह और पड़ेगा। योकोहामा से आगे चल कर जहाज़ नई दुनियाँ में ही पहुँचता है। इस रास्ते जाने वाले को कलकत्ता में तो

बहुत कम्पनियों के दफ़्तर नहीं मिलेंगे; परन्तु हांगकांग पहुँच कर बहुत सी कम्पनियों के दफ़्तर मिलते हैं। यह रास्ता धनिक विद्यार्थियों, सैलानी लोगों, तथा व्यापारियों के लिए ठीक है। मगर मज़दूर लोगों के लिए इधर जाना अच्छा नहीं; क्योंकि इधर का रास्ता मज़दूरों के लिए बन्द ही समझना चाहिए। कोई कोई अंग्रेज़ी जानने वाला मज़दूर या निर्धन विद्यार्थी अमरीकन पोशाक पहिन कर भले ही इधर से अमरीका पहुँच जाए, किन्तु दूसरों के लिए तो यह रास्ता बन्द हो गया है।

योरप के रास्ते जाने वाले को, बम्बई, या कोलम्बो से टिकट ख़रीदना उचित है। कोलम्बो से टिकट ख़रीदना सब से अच्छा है; क्योंकि वहां बहुत सी कम्पनियों के जहाज़ आकर ठहरते हैं। Norddeutscher Lloyd कम्पनी के जहाज़ कोलम्बो से मारसलज़ जाते हैं और इसी कम्पनी के जहाज़ वहां से अमरीका भी पहुँचते हैं। यदि इस कम्पनी का जहाज़ न मिले तो Hamberg American के जहाज़ में यात्री जा सकता है। बम्बई से Austrian Lloyd कम्पनी के जहाज़ पर सवार हो यात्री पोर्टसैयद पहुँच कर वहां से आगे किसी दूसरी कम्पनी के जहाज़ से अमरीका पहुँच सकता है। जहां तक हो सके अंग्रेज़ी कम्पनियों से बचना चाहिए। हालैंड, जर्मन, आस्ट्रियन, अमरीकन कम्पनियों के जहाज़ बहुत मिलेंगे, जिन पर यात्री को बड़ा आराम मिलेगा और बेइज़्ज़ती होने का भी डर नहीं रहेगा। मैंने जर्मन कम्पनी के स्टीमर में सफर किया है और आगे को भी जर्मन स्टीमर द्वारा ही यात्रा करने का विचार करता हूँ।

इस रास्ते बम्बई या कोलम्बो होकर जाने से अदन, स्वेज़,

पोर्टसैयद, नेपल्ज़, जिनोआ, मारसल्ज़ आदि बंदरगाह पड़ते हैं। मारसल्ज़ फ्रांस का बंदरगाह है। इसके आगे के बंदरगाहों के नाम देने कठिन हैं, क्योंकि यहां से आगे जाने में भिन्न भिन्न रास्ते पड़ते हैं और प्रत्येक कम्पनी के जहाज़ अपने अपने सुभीते अनुसार जुदा जुदा बंदरगाहों पर ठहरते हैं। हां, इङ्गलैंड के किसी बंदरगाह से जब जहाज़ अमरीका की ओर छूटता है तो सीधा न्यूयार्क, बोस्टन, फ़िलेडल्फ़िया आदि नई दुनियां के शहरों में ही जाकर ठहरता है। रास्ते में और कोई बंदरगाह नहीं पड़ता।

प्र० ३—क्या यहां से चलते समय किसी अफ़सर की इजाज़त लेनी ज़रूरी है? यदि है तो किसकी?

उ०—मैंने तो जाते समय किसी की इजाज़त नहीं ली थी। लेकिन सुना जाता है कि आजकल मेजिस्ट्रेट की आज्ञा लेनी पड़ती है। यदि ऐसा है तो इससे डर क्या है। कोई भी भला पुरुष समुद्र-यात्रा का विरोधी नहीं हो सकता, फिर भला एक अंग्रेज़ कैसे होगा। दूसरे, आज्ञा ले लेने से एक और लाभ यह भी हो जाता है कि बाहर निकल कर अपना परिचय देने में आसानी हो जाती है। डाकख़ाने से चिट्ठियां नहीं मिलतीं, जब तक किसी अफ़सर या भद्रपुरुष की सिफ़ारशी चिट्ठी पास न हो। इसलिए विद्या रसिक निर्धन विद्यार्थी को ऐसे सर्टिफ़िकेट ले लेने से कोई हानि नहीं होगी। यों जाने वाले चले ही जाते हैं और उनके काम बिना चिट्ठियों के ही निकल सकते हैं। मेरे पास किसी कौंसल का सर्टिफ़िकेट नहीं था, इसी तरह सारी दुनियां घूम आया हूं।

प्र० ४—कौन से दिनों में यहां से जाना चाहिये?

उ०—जो लोग अमरीका सैर के लिए जाना चाहते हैं, और जिनको अपना धन खर्च करना है वे अमरीका चाहे जिस मौसम में चले जावें, उनको सब ऋतु बराबर हैं। परन्तु जो लोग विद्याध्ययन के लिए जाना चाहते हैं, और जिनके पास अपना खर्च करने को रुपया है, उनको चाहिए कि वे अगस्त के आरम्भ में ही यहां से चल दें, ताकि सेप्टेम्बर में सेशन शुरू होने से पहिले ही अमरीका पहुँच जावें; क्योंकि अमरीकन युनिवर्सिटियों का साल सेप्टेम्बर के आख़िर में शुरू होता है। जिनको आधे साल के आरम्भ में जाकर अध्ययन शुरू करना है, उन्हें दिसम्बर में यहां से चल देना चाहिए, ताकि वे जनवरी में वहां पहुँच, अर्द्धवर्ष के आरम्भ में युनिवर्सिटी में दाख़िल हो सकें। मगर यह उनके लिए अधिक लाभकारी न होगा। स्टेट युनिवर्सिटियों में साल की पढ़ाई बाक़ायदा होती है। उनमें दाख़िल होने वाले विद्यार्थी को शुरू वर्ष से दाख़िल होना बहुत मुफ़ीद होगा।

हां, जो शिकागो विश्वविद्यालय में जाकर दाख़िल होना चाहते हैं वे नवम्बर में यहां से चले जावें, या मई में यहां से रवाना हो पड़ें, अथवा अगस्त में ही चल दें, क्योंकि वहां तिमाही ([illegible]) का दस्तूर है। हर तीन महीने में टाइमटेबिल बदलता है और बारह महीने पढ़ाई रहती है। वहां जाने वाला धनवान विद्यार्थी चाहे किसी ऋतु में चला जावे।

कमाने में लग जायें। सेप्टेम्बर तक धन कमा फिर विश्वविद्यालय में दाखिल हो सकते हैं। चार पांच सौ रुपया वे इस दरम्यान में कमा लेंगे, इससे उनको पढ़ाई में सुभीता होगा; क्योंकि गर्मियों के ही दिन अमरीका में धन कमाने के होते हैं। जो लोग खाली मज़दूरी के लिए जाना चाहते हैं वे भी यदि एप्रिल में ही जायें तो अच्छा है, क्योंकि गर्मियों में काम की अधिकता होने से उनको काम मिल जाएगा और वे काम में लग उस देश की बातों से वाक़फीयत हासिल कर सकेंगे। सर्दियों में यदि उन्हें काम न भी मिले तो कम से कम भूख से तो नहीं मरेंगे। दूसरी बात यह है कि गर्मियों में कम ख़र्च पड़ता है। मौसिम अपने मुआफिक़ होती है। आदमी घूमघाम कर ऐसा काम तलाश कर लेता है, जहां उसका सदा के लिए पांव जमा रहे। वणिज व्योपार के लिए जाने वाले सज्जनों को अक्तूबर में यहां से चल देना ठीक है; क्योंकि जाड़े के दिनों में सभी व्यापारी अपनी अपनी कोठियों में मौजूद रहते हैं। इसलिए भारतीय वणिकों को मेल मुलाकात करने तथा अपने व्योपार सम्बन्धी बातों के जानने में सुभीता होगा। सर्दियों में ही विदेशी व्यापारी अमरीका जाते हैं और इन्हीं दिनों वहां पर सब धुनों का ज़ोर होता है। गर्मियों में तो यहां के धनी लोग इधर उधर सैर सपाटे के लिए चले जाते हैं; इसलिए मतलब सिद्ध नहीं हो सकता।

प्र० ५—कम ख़र्च वाला रास्ता कौन सा है?

उ०—यों तो कम ख़र्च पर जाने के लिए हांगकांग वाला रास्ता ही ठीक है, लेकिन उस रास्ते जाने वाले बहुत से मज़दूर-पेशा लोगों को अमरीका वालों ने वापिस लौटा दिया है; इस-

लिए मैं किसी भी मज़दूर-पेशा भाई को उधर से जाने की राय नहीं दूंगा। हां, जो सैर सपाटे अथवा वणिज व्यापार के लिए जाना चाहते हैं उनको उधर से जाना ठीक होगा। अमरीका के दोनों पोर्ट—सियेटल और सनफ्रांसिसको—उनके लिए अच्छे हैं। जो भाई विद्या पढ़ने के लिए जाते हैं और जिनके पास काफी रुपया ख़र्च करने को है, उन्हें युरोप के रास्ते ही जाना ठीक होगा। निर्धन विद्यार्थियों के लिए मैं इतना कहूंगा कि उन्हें हांगकांग के रास्ते जाने में बहुत बड़ी दिक्कतें उठानी पड़ेंगी। अतएव उन्हें भी, या तो न्यूयार्क के रास्ते जाना चाहिए या गालवस्टन Texas के रास्ते।

प्र० ६—कम से कम कितने रुपये का इन्तज़ाम करना चाहिए ?

उ०—युरोप के रास्ते जाने के लिए बम्बई से न्यूयार्क तक का किराया साढ़े तीन सौ रुपया पड़ेगा और न्यूयार्क बंदरगाह पर उतरते वक्त दिखाने के लिए २००) रुपया नक़द होना ज़रूरी है। इस हिसाब से कम से कम साढ़े पांच सौ रुपया अवश्य ही एक आदमी के पास होना चाहिए। इतने से आदमी न्यूयार्क तक पहुच सकता है और आगे अमरीका के पश्चिमी भाग की ओर ज़ाने के लिए दो सौ रुपये की और आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए विचारशील पुरुष के लिए यह आवश्यक है कि वह एक हज़ार से कम रुपया साथ न ले। परदेश में जाने के लिए मनुष्य के पास केवल गिनती-मिनती का ही रुपया नहीं चाहिए, बल्कि ज़रूरत से कुछ अधिक साथ लेना बड़ी भारी बुद्धिमत्ता है। कुछ अधिक रुपया होने से हमेशा आराम रहता है। बहुत से भाइयों ने केवल यही भूल कर बड़ा कष्ट उठाया है, और

उन लोगों को दिल खोल कर गालियां दी हैं जिन्होंने बहुत अपने प्यारे वतन से बाहर जाने की उत्तेजना दी थी। सब आदमी एक से नहीं होते। वीर पुरुष तो आफ़त में घबराते नहीं, बल्कि उसका सामना करना अपना सौभाग्य समझते हैं। परन्तु भारतीय युवकों में अभी यह गुण नहीं आया। इसलिए मैं यह ज़रूर निवेदन करूंगा कि अमरीका जाने वाले सज्जन अवश्य अधिक रुपया साथ लेलें, ताकि उन्हें जीवन-संग्राम की तैयारी का अवसर मिल सके। जो भाई हांगकांग के रास्ते जाना चाहते हैं उनके पास यदि कुछ कम रुपया हो तो कोई बात नहीं, मगर यूरोप के रास्ते जाने वालों के पास अवश्य ही अधिक रुपया होना चाहिए; क्योंकि उधर ख़र्च ज़्यादा पड़ता है।

प्र० ७—अमरीकन पोर्ट पर उतरते वक़्त यात्री से क्या क्या प्रश्न पूछे जाते हैं?

उ०—जिस वक़्त जहाज़ पोर्ट में आकर पहुंचता है, तो किनारे पर से गवर्नमेंट के अफ़सर आकर विदेशी यात्रियों की जाँच पड़ताल करते हैं। उनका रुपया देखा जाता है और ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं, "तुम किस देश के रहने वाले हो? तुम किस उद्देश्य से इस मुल्क में दाखिल होना चाहते हो? तुम एक से अधिक विवाह को मानते हो कि नहीं? तुम अनार्किस्ट सिद्धान्त को सत्य समझते हो? क्या तुम यह रुपया किसी से क़र्ज़ लेकर आये हो? तुमको किसने यहां आने को लिखा था? तुम्हारा मज़हब क्या है?" बस, ऐसे ही प्रश्न पूछे जाते हैं, क्योंकि उस देश में एक से अधिक स्त्रियों के साथ विवाह करना क़ानूनन मना है। इसलिए बहुविवाह के सिद्धान्त को

मानने वाला उस देश में दाखिल नहीं हो सकता। अनार्किस्ट सिद्धान्त का प्रचार भी उस देश के क़ानून के विरुद्ध है, और यह भी उस देश की गवर्नमेन्ट नहीं चाहती कि कोई आदमी वहां पर किसी के धोखा देने से, या ठेके पर काम करने के लिए आवे।

प्र० ८—अमरीका के बन्दरगाह पर उतरने के बाद एक अनजान यात्री को क्या करना उचित है?

उ०—अमरीकन पोर्ट पर उतरते ही एक अनजान यात्री को सब से पहले (Y. M. C. A.) यंगमेन क्रिश्चियन एसोसिएशन का मकान तलाश करना चाहिए। वहां पहुंच कर सभा के मन्त्री द्वारा अपने रहने का प्रबन्ध करना ठीक होगा; क्योंकि अमरीका के बड़े शहरों में बहुत से लोग अनजान आदमी को धोखा देने वाले मिल जाते हैं, जिनसे बच कर रहना बड़ा ज़रूरी है। यदि ऐसा न करना हो तो किसी सिपाही से किसी सस्ते होटल का पता पूछ लेना चाहिए, जहां डेढ़ रुपये या पचास सेन्ट रोज़ के हिसाब से किराये का दस्तूर है। ५० सेन्ट रोज़ पर अच्छा कमरा सोने को मिल सकता है, या ज्यादा हुआ तो ७५ सेन्ट रोज़ समझिए। मगर भोजन इसमें शामिल नहीं। एक निरामिष-भोजी मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह कुछ दिन फल या दूध रोटी पर ही गुज़ारा करे, जब तक कि उसका कोई अच्छा शाक-भोजनालय (Vegetarian Hotel) न मिले, या कहीं अच्छा मकान खाना पकाने को किराये पर न मिल सके। यों ही किसी का शीघ्र विश्वास नहीं करना चाहिए। क्योंकि उधर ऐसे चलते पुरज़े बहुत मिलते हैं जो थोड़ी सी भी गफलत से फ़ायदा उठा पूरी हजामत कर देते हैं। अनजान

यात्री को हमेशा आंख कान खुले रखने चाहिएँ। अमरीका की गलियों के कोने कोने पर गलियों के नाम लिखे रहते हैं, तथा घरों के नम्बर सुन्दर अक्षरों में छिपे होते हैं। हमेशा जब कोई बात पूछनी हो तो पुलिस वाले से पूछें। और यह तो कभी किसी को न बतलावे कि मेरे पास इतना रुपया है, न ही बाज़ारी लोगों के सामने अपनी मोहरों की थैली खोले। जब कभी रुपये की ज़रूरत हो तो ऐसी जगह बैठ कर रुपया निकाले जहां कोई न देखता हो। बाज़ारी ज़रूरत के लिए दो चार डालर जेब या बटुये में रख लेना अच्छा होगा।

प्र० ६—अमरीकन युनिवर्सिटी में दाखिल होने के लिए कितनी लियाक़त की ज़रूरत है ?

उ०—हाईस्कूल से डिग्री प्राप्त विद्यार्थी अमरीका की युनिवर्सिटी में पहले ख़ास-छात्र (Special Student) के तौर पर दाखिल हो सकता है। इसके साथ साथ जो कुछ कमी होती है उसको भी पूरा करता रहता है; क्योंकि युनिवर्सिटी में दाखिल होने के लिए अंगरेज़ी के अतिरिक्त दूसरी और भाषा में पूरे नम्बर पाये बिना विद्यार्थी युनिवर्सिटी का बाक़ायदा विद्यार्थी (Regular Student) नहीं हो सकता। मैं जब शिकागो युनिवर्सिटी में पढ़ा करता था तो पहले एक वर्ष ख़ास-छात्र (Special Student) रहा। उसके बाद बाक़ायदा-छात्र हो गया। इस प्रकार हर एक युनिवर्सिटी का अपना अलहदा अलहदा दस्तूर है। इसलिए जो भारतीय छात्र अमरीका की युनिवर्सिटी में दाखिल होना चाहे उसे चाहिए कि वह यहां मेट्रिक (Entrance) की परीक्षा अवश्य उत्तीर्ण कर ले। यदि वे बिना इसके चले जायेंगे तो उनको वहां

जाकर हाईस्कूल की परीक्षा पास करनी पड़ेगी। अमरीका में कोई भी विद्यार्थी विद्या से वञ्चित नहीं रह सकता, यदि उसकी अपनी इच्छा विद्या-प्राप्ति की हो। इस अंश से भारतीय छात्रों को किसी बात का भय नहीं करना चाहिए।

प्र० १०—क्या कोई सर्टिफिकेट साथ ले जाने की ज़रूरत है?

उ०—हां, जिस विद्यार्थी ने मेट्रिक्युलेशन पास किया है उसको चाहिए कि अपने हेडमास्टर से एक अच्छे चाल-चलन का सर्टिफिकेट तथा उस हाईस्कूल की एक रिपोर्ट साथ ले जावे, ताकि अमरीकन युनिवर्सिटी के प्रेसीडेन्ट को भारतीय हाईस्कूल की स्थिति मालूम करने में आसानी हो। जिस विद्यार्थी ने एफ० ए० पास किया हो, या एफ० ए० तक पढ़ा हो वह अपने कालेज के प्रेसीडेन्ट से उतनी पढ़ाई का Credit Certificate लिखवा कर साथ लेले। उसमें यह लिखना होगा कि इस विद्यार्थी ने कालेज में कुल इतने घंटे इस विषय पर अध्ययन में ख़र्च किये हैं और उसमें योग्यता रखता है। ऐसे सर्टिफिकेट के मिलने से विद्यार्थी को अमरीका में डिग्री हासिल करने में सुभीता होगा। जो भाई इन्ट्रेन्स फेल हों उन्हें भी अपने हेडमास्टर से ऐसा ही एक सर्टिफिकेट लेना चाहिए, जिसमें उनके पास किये हुए विषयों के घंटों का ब्योरा हो; क्योंकि अमरीका की युनिवर्सिटियों में नम्बर (Credits) घंटों के हिसाब से मिलते हैं। उदाहरणार्थ—एक विद्यार्थी को बी० ए० पास करने में १२८ Credits की ज़रूरत पड़ती है। अर्द्धवर्ष में सोलह Credits विद्यार्थी लेते हैं। सोलह घंटे प्रत्येक सप्ताह में विश्वविद्यालय में पढ़ने से सोलह

Credits गिने जाते हैं। साल के बत्तीस Credits हुए। चार साल में बी० ए० पास होता है। इस हिसाब से १२८ Credits हो जाने से डिग्री मिल जाती है। जो होशियार छात्र हैं वे चाहे तीन ही वर्ष में डिग्री प्राप्त कर लें। वे सोलह से अधिक घंटे प्रति सप्ताह पढ़ सकते हैं; परन्तु इसके लिए उन्हें प्रेसीडेन्ट से खास आज्ञा लेनी पड़ेगी।

प्र० ११—क्या अमरीका में दाख़िल होते समय कोई डाक्टरी भी होती है?

उ०—जिस समय कोई भारतीय सज्जन किसी भारतीय बन्दरगाह से अमरीका की ओर जाता है, उसकी पहिले वहां पर डाक्टरी होती है। जब वह अमरीका के किसी बन्दरगाह में जाकर पहुंचता है तो दूसरी डाक्टरी वहां पर होती है। भेद केवल इतना ही है कि भारतीय बन्दरगाह पर डाक्टर बाहर की सफ़ाई अधिक देखता है। यदि कपड़े मैले हों तो स्टीम स्नान कराया जाता है। जो डेक के मुसाफिर होते हैं उनके सब कपड़ों को ऐसा स्नान कराते हैं। लेकिन ऊंचे दर्जे के मुसाफिरों के साथ ऐसा बर्ताव नहीं किया जाता। उनकी केवल नब्ज़ दुहाई ही होती है। लेकिन अमरीकन बन्दरगाह पर जो डाक्टरी होती है उसमें अधिक आंखों की परीक्षा की जाती है। मायोपिया ग्रसित आंख वालों को रोका नहीं जाता; परन्तु यदि कुकड़ों की बीमारी हो तो मुसाफिर लौटा दिए जाते हैं। दूसरी कोई बीमारी होने पर भी ऐसा ही सलूक किया जाता है।

प्र० १२—आत्मावलम्बन करने वाले विद्यार्थी क्या करें?

उ०—जो विद्यार्थी अपने बाहुबल से धन कमा अमरीका

में विद्योपार्जन करना चाहते हैं, उनको सब से पहले मज़दूरी करने की आदत डालनी चाहिए। वर्णों के झूठे अभिमान को त्याग सब प्रकार की मज़दूरी करने का अभ्यास करना चाहिए। यहां से कम से कम आठ सौ रुपया अवश्य साथ लेकर चलें। जिसमें किराये तथा दिखाने के योग्य धन पास रहे, और जब अमरीका पहुंच जावें तो वहां के दैनिक पत्रों को पढ़ा करें। उन पत्रों के पिछले भाग में Help Wanted वैसे इश्तहार छपते हैं। उनमें जो काम अपने मन लायक़ हो उसके विषय में दरख्वास्त करें। यदि युनिवर्सिटी में दाखिल हों तो वहां के Employment Bureau में जाकर काम मांगें। यदि इस प्रकार भी काम न मिले तो घर घर घूम कर काम पूछें। इस तरह उनको काम अवश्य ही मिल जावेगा।

प्र० १३—क्या कोई ऐसा हुनर है जिसको सीख कर भारतीय विद्यार्थी अमरीका में जा आसानी से काम तलाश कर विद्याध्ययन तथा अपना निर्वाह कर सकता है ?

यह अमरीका जाकर अपना कार्य आसानी से कर सकता है। थोड़ा बढ़ई का काम जान लेने से भी बहुत कुछ लाभ हो सकता है। यदि मेमारी का काम जानता हो तो और भी अच्छा होगा; क्योंकि कारीगर मेमार को पन्द्रह बीस रुपया रोज़ से कम नहीं मिलता। गर्ज़ यह कि यदि भारतीय छात्र कुछ न कुछ गुण अपने ही देश में सीख कर वहां जायें तो उनके लिए धन कमाने तथा पढ़ने में बड़ा सुभीता हो सकता है।

जिन छात्रों के पास बिलकुल ही धन नहीं है और जो जहाज़ों पर काम करके अमरीका जाना चाहते हैं उनके रास्ते में भारी रुकावटें हैं। अगर गोरा रङ्ग और मांस खाने से घृणा न हो तो कामयाबी हो सकती है; क्योंकि बम्बई आदि बन्दरगाहों पर बहुत से जहाज़ आते हैं जहां पर खलासियों की प्रायः आवश्यकता रहती है। उन पर भरती हो जाना तो ऐसा कठिन नहीं, परन्तु उसे निभाना भारतीय छात्र के लिए बड़ी कठिन बात है।

प्र० १४—क्या संस्कृत जानने वाला विद्यार्थी वहां अपने गुज़ारे लायक धन कमा अपना अध्ययन पूरा नहीं कर सकता?

उ०—यह हो सकता है और नहीं भी हो सकता। यदि विद्यार्थी बोस्टन, शिकागो, न्यूयार्क आदि शहरों की किसी युनिवर्सिटी में पढ़ता हो तो सम्भव है उसे कोई संस्कृत का व्यसनी अमरीकन—पुरुष या स्त्री—मिल जावे। परन्तु इस विश्वास पर अमरीका जाना भूल है। शायद मिल जावे, शायद न भी मिले। जो विद्यार्थी अच्छा व्याख्यानदाता हो और जिसे अपने देश की सामाजिक, धार्मिक तथा साहित्य सम्बन्धी बातों की वाकफ़ीयत हो वह क्लबों द्वारा अपने व्या-

ख्यानों का सिलसिला जमा सकता है। परन्तु यह बात पूर्वीय भाग के शहरों में सम्भव है, पश्चिमीय भाग में नहीं। जिसके पास व्याख्यान के साथ भिन्न भिन्न प्रान्तों के Slides हों और उसने भारत में खूब भ्रमण किया हो वह अपना गुज़ारा मज़े में चला सकता है; क्योंकि गिरजों और क्लबों में व्याख्यान सुनने वाले बहुत मिलेंगे और वे काफी उजरत भी देते हैं। इसलिए ज़रूरी है कि वह भारतीय छात्र, जिसको यह काम करना हो, यहां से फोटोग्राफी और Slides बनाना सीख कर चले और अपने साथ भारत के छः सात सौ Slides ले जावे। मेजिक लालटैन वहां मिल सकेगी, या किराये पर मिल सकती है।

प्र० १५—हमको कौन कौन सी चीज़ें साथ ले जानी चाहिएँ?

उ०—अधिक असबाव साथ लेना व्यर्थ है। यहां से एक अच्छा भारी ओवरकोट बनवा ले। एक अच्छा गरम सूट (अंगरेज़ी फेशन का) तथा एक उस्तरा, कंघी आदि हजामत का सामान साथ लेना उचित है। एक कम्बल, एक डायरी भी साथ लेना चाहिए। छोटे से बेग में ये सब चीज़ डाल ले। चार पांच शर्टें, पांच छः कालर, तथा टाई भी रख ले। एक अंगरेज़ी केप Cap ख़रीद ले, बड़ी टोपी अमरीका पहुंच कर ख़रीदना अच्छा होगा। असबाब जितना कम हो उतना आराम मिलेगा। बाक़ी ज़रूरत की चीज़ें आगे जाकर ख़रीदी जा सकती हैं।

प्र० १६—खाना आप पकाने वाले के लिए क्या इन्तज़ाम हो सकता है?

उ०—मेरे साथ जो लोग डेक में गये थे वे सब अपना खाना आप पकाते थे। हांगकांग से वैंकोवर तक एक महीने के क़रीब लगता है। सारा रास्ता हम लोगों ने अपना खाना पका कर खाया था। इसलिए यदि ज़्यादा मुसाफिर ऐसे हों जो खाना आप पकाकर खाना चाहें तब तो प्रबन्ध हो सकता है, मगर एक दो के लिए इन्तज़ाम होना कठिन है। हां, अमरीका पहुँच वहां अपना जुदा कमरा किराये पर ले आदमी जैसा चाहे कर सकता है। वहां कोई ऐसी दिक्कत नहीं होती। मैं बराबर हाथ से खाना पकाता था। वाशिङ्गटन युनिवर्सिटी में पढ़ने वाले अधिकांश विद्यार्थियों का ऐसा ही प्रबन्ध था; क्योंकि इस तरह सस्ते में काम चल जाता है।

प्र० १७—अमरीका में भारतीय छात्रों की मदद के लिए कोई सभा भी स्थापित है?

उ०—आजकल वहां एक ऐसी सभा स्थापित है, जिसका उद्देश्य भारतीय छात्रों की सहायता करना है। उसका नाम हिन्दोस्थान एसोसियेशन आफ़ अमरीका है। इसका हेड आफ़िस नालंदा क्लब उर्बाना (Urbana) Ill है। इसके द्वारा विशेष मदद छात्रों को मिलती है। अलबत्ता अपनी मुश्किल आप हल करनी पड़ती हैं। कोई किसी का हाथ नहीं बटाता। साधारण तौर पर किसी से मदद मिल जावे वह और बात है, या किसी देश-भक्त व्यक्ति विशेष ने किसी छात्र की मदद कर दी। परन्तु अमरीका जाने वाले छात्र को यह समझ लेना चाहिए कि वहां उसे अपनी लड़ाइयां आप लड़नी हैं। कोई दूसरा उसकी मदद नहीं करेगा।

प्र० १८—जो लोग बिलकुल मांस नहीं खाते क्या वे भी अपना प्रबन्ध कर सकते हैं?

उ०—इसके लिए विद्यार्थी को सब प्रकार के कष्ट सहने के लिए तैयार रहना चाहिए। मुझे इस नियम के पालनार्थ भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। यहां से जाते समय जहाज़ में यदि आप पकाने का प्रबन्ध हो सके तो क्या ही कहना; परन्तु यदि ऐसा न हो तो जहाज़ी रसोइये के साथ विधि मिलानी चाहिए। उसको कुछ दक्षिणा देने पर काम बन सकता है, और वह मांस रहित चीज़ें खाने को देने का प्रबन्ध कर देता है।

जब अमरीका पहुंच गये तो वहां फूल फल, दूध मक्खन आदि बहुतेरी चीज़ें मिल सकती हैं। वहां यदि होटल में जाना हो तो बड़ी सावधानी से खाना मांगें; क्योंकि उधर अधिकांश खानों में मांस, अंडा, चरबी आदि का प्रयोग होता है। खाने वाले को वहां के नौकर से सब कुछ अच्छी प्रकार दरयाफ़्त कर लेना चाहिए, नहीं तो मांस चुपचाप अन्दर पेट में पहुंच जावेगा और फिर निकलेगा नहीं। बड़े बड़े शहरों में निरामिष होटल भी हैं, पर नये आदमी को उनका पता लगना बड़ा कठिन होता है, और वहां पूछने पर उनका पता नहीं मिलेगा। क्योंकि अधिकांश लोग मांस खाते हैं, वे ऐसे होटलों के विषय में कुछ नहीं जानते। हां, यदि किसी Drug store में जाकर शहर की Directory (सूचनादायक पुस्तक) में 'Vegetarian cafe' ऐसा तलाश किया जावे तो संभव है कि कुछ पता चल सके।

प्र० १९—क्या कोई मिडिल पास छात्र अमरीका जाने से फ़ायदा उठा सकता है?

उ०—क्यों नहीं। यदि कोई लड़का कुछ भी न पढ़ा हो

और वह अमरीका चला जावे, वह भी वहां जाकर अच्छा फ़ायदा उठा सकता है। वहां तो हिम्मत की ज़रूरत है। सीखने के लिए सब रास्ते खुले हैं। मिडिल पास वहां जाकर, हाईस्कूल में दाख़िल होकर, वहां की परीक्षा से उत्तीर्ण हो फिर युनिवर्सिटी में दाख़िल हो सकता है।

प्र० २०—क्या उतरते समय किसी की इजाज़त लेनी पड़ती है?

उ०—मैंने बतला दिया है कि अमरीकन पोर्ट पर पहुँचते ही युनाइटेड स्टेटस् के अफसर आकर प्रश्न करते हैं, बस उन्हीं की इजाज़त समझिए। यदि कोई बीमारी न हो अथवा दिखाने लायक़ रुपया हो तो वे उतरने की इजाज़त दे देंगे।

प्र० २१—काम के लिए अमरीका के किस भाग में सुभीता है?

उ०—अमरीका की पश्चिमी रियासतों में काम आसानी से मिल सकता है। केलेफोर्निया, आरेगन, वाशिङ्गटन, आइडाहो, मोन्टाना आदि रियासतों में काम की बहुतायत रहती है। वहां गर्मियों में तो पकड़ पकड़ कर आदमियों को ले जाते हैं, उनकी मिन्नतें करते हैं। उन दिनों साढ़े सात रुपये रोज़ तक मज़दूरी मिलती है।

प्र० २२—अमरीका में रहन-सहन तथा मकान के किराये आदि का क्या प्रबन्ध है?

उ०—अमरीका में लोग अंग्रेज़ी पोशाक पहिनते हैं, परन्तु उसमें थोड़ा सा फैशन का भेद है। इसलिए भारत से जाने वालों को चाहिए कि यहां से अधिक कपड़े न बन-

वावें। वहां जाकर बने बनाये कपड़े ख़रीद सकते हैं। अमरीका में रहने के लिए कमरे मिलते हैं। किसी कमरे का किराया २४ रुपया मासिक, किसी के तीस रुपये मासिक, इस प्रकार जैसा कमरा हो वैसा भाड़ा होता है। जो विद्यार्थी विश्वविद्यालय के बोर्डिङ्ग हाउसों में रहना चाहते हैं उनको किराया अधिक पड़ता है। किसी किसी विश्वविद्यालय में सस्ता पड़ता है। भिन्न भिन्न विद्यालयों में भिन्न भिन्न प्रबन्ध हैं। इन कमरों में खाने का प्रबन्ध नहीं किया जा सकता। इसलिए या तो युनिवर्सिटी के होटल में विद्यार्थी जाते हैं, या विद्यालय के पास कोई होटल हो तो उसमें अपना प्रबन्ध कर लेते हैं।

बाकी धुलाई आदि का ख़र्च कोई पांच आने समझिए, कालर के पांच पैसे। अन्दर की बनियाइन के चार आने तक, हजामत आप करना सीखना चाहिए। नाई हजामत के आठ आने याने १५ सेन्ट लेता है। बाल कटवाई तेरह आने देने पड़ते हैं। बाक़ी ख़र्च भारत से कई गुणा ज़्यादा है। कुल मासिक ख़र्च ६५ रुपये वाजवी है। इतने में एक भलामानस छात्र आनन्द से अपना गुज़ारा कर सकता है।

जब मकान तलाश करना हो तो दैनिक पत्रों को पढ़ना चाहिए। उनमें घरों के विज्ञापन रहते हैं। गलियों में घूम घूम कर भी मकान तलाश करते हैं, दोनों ओर देखते जाना चाहिए। जिस घर में कमरा ख़ाली हो वहां—Rooms For Rent—Furnished—Unfurnished Rooms—House to let—आदि वाक्य लिखे रहते हैं। जहां कमरा ख़ाली देखा उस घर का बटन दबाया। घर की मालकिन आकर दरवाज़ा खोल

देगी। उससे सब कुछ ठीक ठाक कर लेना चाहिए। बात बड़ी सभ्यता से करना उचित है। जिस घर में पुरुष रहे उसकी सफ़ाई का पूरा पूरा ध्यान रक्खे। कहीं इधर उधर थूकना नहीं चाहिए। अमरीका में प्रातःकाल नहाने का रिवाज़ नहीं है। यदि सारा घर अपने ताल्लुक़ में हो तो दूसरी बात है जब इच्छा हुई नहावे, नहीं तो दोपहर के समय या रात को सोने से पहले नहाना चाहिए। प्रातःकाल जब शौच आदि जाना हो तो धीरे धीरे ऐसी चाल से जावे कि किसी के सोने में विघ्न न हो। दूसरे के दुख सुख का ऐसा ही ख्याल रक्खे जैसे अपने दुख सुख का। यह न समझ ले कि मैं तो किराया देता हूं जो चाहे करूँ। ऐसे पुरुष को उसी दम मकान से निकाल दिया जाता है।

जब किसी स्त्री से बात करे तो कभी कोई असभ्य शब्द या हरकत न करे। वहां के स्त्री पुरुष, उस देश के रिवाज़ के अनुसार, बात करते समय बड़े नम्र तथा मुस्करे भाव को प्रगट करते हैं। इसका कोई उलटा पुलटा अर्थ न समझ लेना चाहिए। यदि बात करते समय कभी कोई शब्द समझ में न आवे और दुबारा पूछना हो तो 'I beg your pardon' ऐसा कह कर दुबारा पूछे। यदि चलते समय किसी को भूल से ठोकर लग जावे तो फौरन 'I beg your pardon' कहे। यदि कोई आदमी आपकी गिरी हुई कोई चीज़ उठावे या किसी बात में ज़रा सा भी प्रेम दिखावे तो फौरन उसको "Thank you very much" ऐसा कहना उचित है। नहीं तो वे लोग समझते हैं कि यह पुरुष असभ्य है, और फिर बात नहीं करते। यह बातें यद्यपि बड़ी छोटी सी हैं, पर उस देश में इन बातों से आदमी की पहिचान की जाती है।

यदि कहीं किसी से मिलने जाना हो, या स्कूल में ही गये तो हमेशा अपना कालर टाई, कोट, पतलून, बाल आदि ठीक करके जाना चाहिए। बूट साफ हों, हजामत बनी हुई हो। कोई कसर न रहे। कपड़े हमेशा साफ, सुथरे हों। इन बातों का वहां बड़ा ही ख़्याल किया जाता है। हमारे देश की सभ्यता और प्रकार की है, उस देश की सभ्यता दूसरे ढंग की है। इसलिए विद्यार्थियों को इन बातों का जानना बड़ा ज़रूरी है।

अब शौच की सुनिए। उस देश तथा सारे युरोप में "काग़ज़" इस्तेमाल करने का रिवाज़ है, जल का लोटा पाखाने में ले जाने का दस्तूर नहीं। शौच के कमरे में स्टूल सा होता है, उस पर पाजामा नीचे कर आदमी बैठ जाता है; जब अपना काम कर चुकता है तो काग़ज़ों की गत्ती में से काग़ज़ फाड़ कर गुदा साफ़ कर लेता है। इसके बाद जंजीर खींच देता है उससे सारा मल नीचे वह बड़े नलों द्वारा होता हुआ समुद्र अथवा नदियों में चला जाता है। वह काग़ज़ ख़ास तरह से तैयार किया जाता है और उसको Toilet Paper कहते हैं। यह बड़ा हलका होता है। घर की मालकिन साबुन, शौचपत्र आदि देती है। उस स्टूल पर कभी दोनों पांव रख कर न बैठना चाहिए, बल्कि जैसे स्टूल पर नीचे भूमि पर पाओं रख कर बैठा जाता है उसी तरह से बैठना उचित है। जब शौच न जाना हो, केवल पेशाब करना हो तो लकड़ी के चौखटे को बिलकुल ऊपर उठा देना चाहिए। जब किसी से पाखाने की बाबत पूछना हो तो उससे यह कहे कि Water Closet अथवा Lavatory कहां पर है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने रहन-सहन के विषय में बतला दी हैं। आशा है कि मेरे भाई इनसे लाभ उठावेंगे।

प्र० २३—अमरीकन लोग भारतीय विद्यार्थियों से कैसा बर्ताव करते हैं?

उ०—स्कूलों, कालेजों तथा युनिवर्सिटियों में अमरीकन विद्यार्थी तथा प्रोफेसर लोग हमारे विद्यार्थियों से अच्छा बर्ताव करते हैं। किसी प्रकार का पक्षपात आदि नहीं करते। दूसरे अमरीकन लोग भी हमारे भारतीय विद्यार्थियों से अच्छा सलूक करते हैं। मगर युरोपियन कुली लोग तथा अन्य भिन्न भिन्न देशों से आये हुए गोरे हमारे भारतीय लोगों से घृणा करते हैं। कारण स्पष्ट है। क्योंकि ये संकुचित हृदयों के लोग होते हैं। अपने देश में उन्होंने कुछ ऐसा नहीं होता, जब अमरीका आजाते हैं तो बड़े मियां बन ऐंठ दिखाने लगते हैं। कुली लोगों में पक्षपात अवश्य होता है। मैंने बड़े बड़े कष्ट इसी लिए उठाये थे; क्योंकि मुझे अपने पठनार्थ रुपया कमाने के लिए मज़दूर लोगों के साथ काम करना पड़ता था। भारतीय विद्यार्थियों तथा दूसरे सज्जनों से एक ऐसी घुन्डी बतला देता हूं जो उनको इन सब कठिनाइयों से बचा देगी।

१६०६ की गर्मियों में मैं सियेटल शहर में काम करता था। वहां पर बहुत से गोरे मज़दूर भी काम करते थे। एक धनी अपनी एक बड़ी हवेली बनवा रहा था। मैं ट्रक को ईंटों से भर कर राजमज़दूरों के पास ले जाता था। मेरे पास जो गोरा मज़दूर काम करता था वह बड़ा ही शरारती और धूर्त था। जब जब उसको मौका मिलता वह मुझे "Damn-Hindu"

नीच हिन्दू कहता और इस तरह मुझे हर रोज़ तंग किया करता था। पहले तो मैंने हिन्दुओं के रिवाज़ के मुताबिक सहनशीलता धारण की और झगड़ा करने से बचता रहा। एक दिन उसने मुझे माता की गाली निकाली। बस, तब मेरी सहनशीलता का अन्त हो गया। उसको पकड़ मैंने नीचे पटका और अपने घुटने उसकी छाती पर रख उसको खूब पीटा और फिर पीट पाट कर छोड़ दिया। उठ कर मैंने उससे कहा, "यदि फिर कभी ऐसी गाली दोगे तो इससे अधिक दक्षिणा मिलेगी।"

बस, वह उसका आख़िरी दिन था। फिर कभी भी उसने मुझे तङ्ग नहीं किया, और हमेशा मुझे भाई कह कर पुकारता और हमेशा बड़ी इज़्ज़त करता था। इसलिए हमारे छात्रों को पाश्चात्य सभ्यता के इस सिद्धान्त—

"The good old plan,
That he should take who has the power,
And he should keep who can."

अर्थात्—"सब से अच्छा और प्राचीन तरीक़ा यही है कि जिसकी शक्ति हो वही अधिकारी बने और उसे ही रखना चाहिए जो बलवान हो।"

के अनुसार उन्हें चाहिए कि वे हमेशा निर्भय रहें और कभी किसी से न डरें। जब कोई गोरा कभी छेड़े, या गाली दे तो फ़ौरन ही उसे पीटना चाहिए। तभी उस देश में मनुष्य प्रतिष्ठा और सन्मान से रह सकता है।

प्र० २४—किस प्रकार की मज़दूरी वहां पर मिलती है?

उ०—अमरीका में विद्यार्थियों को हर प्रकार का काम करना पड़ता है। गर्मियों में खेतों पर जा काम करते हैं, या बाग़ों में फल चुनते हैं, Hops चुनने के लिए इधर उधर चले जाते हैं। जिन दिनों युनिवर्सिटी में आते हैं उन दिनों भी कभी बर्तन साफ़ करने, कभी घर बुहारने, कभी मट्टी झोंकने या घास काटने आदि का काम उनको करना पड़ता है। जो मज़दूर-पेशा लोग होते हैं उनको तो स्थिर नौकरी तलाश करनी पड़ती है। बहुत उनमें से लकड़ी की मिलों, मकानों, तथा बड़े बड़े किसानों के खेतों पर काम करते हैं। सारा वर्ष वहीं काम करते रहते हैं। उनको छः रुपये से लेकर सात आठ रुपये तक रोज़ाना मिलता है। किसी वर्ष कम हो जाय तो हो जाय। जिन दिनों प्रेसीडेन्ट का चुनाव होता है, उस वर्ष महाजन लोगों का हाथ ज़रा ढीला पड़ जाता है। उन दिनों मज़दूरों की मांग कम रहती है।

बस, ऐसे ही काम अमरीका में हमारे लोग करते हैं। बहुत थोड़े आदमी ऐसे हैं, जो दुकानदारी या फेरी करते हों। चाहिए तो यह कि हमारे देश के समझदार लोग वहां जा वणिज व्योपार कर उस देश का धन अपने देश में लावें। मगर उनको तो अभी छूत छात से ही छुट्टी नहीं, बेचारे मज़दूर लोग वहां जा, अपने पुरुषार्थ से धन कमा कर, अपनी शक्ति अनुसार देश का उपकार करते हैं।

प्र० २५—इञ्जीनियरिंग आदि सीखने के लिए कहां पर अच्छा विश्वविद्यालय है? कृपा करके यह भी बतलाइये कि आदमी डैनटिस्ट्री कहां सीख सकता है?

उ०—पैनसिलवेनिया के पिट्सबर्ग शहर में कारनेगी का

खोला हुआ एक बड़ा भारी विश्वविद्यालय है। वहां पर हर प्रकार की इञ्जीनियरिंग का काम सिखाया जाता है। वहां पर जाकर भारतीय छात्र मज़े में इञ्जीनियरिंग का काम सीख सकते हैं, और वह भी बहुत थोड़े ख़र्च पर। यों तो अमरीका की सब रियासतों की युनिवर्सिटियां इञ्जीनियरिंग की शिक्षा देती हैं, पर कारनेगी विश्वविद्यालय ख़ास इसी मतलब के लिए खोला गया है। यदि किसी को वहां का अधिक हाल जानना हो तो—The Registrar Carnegie Technical Institute Pittesburgh. Pa. U. S. A. इस पते पर पत्र भेजें और वहां का केटेलाग मंगवा लें।

जो महाशय दांत बनाने की विद्या सीखना चाहते हैं वे न्यूयार्क, शिकागो, बोस्टन आदि किसी बड़े शहर में जा यह हुनर सीख सकते हैं। वहां पर इसके सिखाने के स्कूल खुले हैं।

प्र० २६—अमरीका में Night Schools नाइट स्कूलों का प्रबन्ध कैसा है?

उ०—अमरीका का शायद ही कोई ऐसा बड़ा शहर होगा जहां पर रात के स्कूल न खुले हों। इन स्कूलों में उन लोगों के पढ़ाने का प्रबन्ध किया गया है जिन्हें दिन को फ़ुरसत नहीं मिलती। कारनेगी विश्वविद्यालय में भी रात को पढ़ाने का प्रबन्ध है। इसी प्रकार जहां मज़दूरी-पेशा लोग हैं और उनको पढ़ने का शौक है, वहां पर ऐसे Night Schools रात के स्कूल खुले हैं। इन स्कूलों में फ़ीस अधिक नहीं होती और प्रत्येक विषय अच्छे शिक्षित अध्यापकों द्वारा सिखाया जाता है। भारतीय सज्जनों को इस बात से निश्चिन्त रहना चाहिए।

उनको अमरीका में विद्याध्ययन के हर प्रकार के सुभीते मिलेंगे। केवल वही आदमी वहां पर विद्या नहीं पढ़ सकता जिसकी अपनी इच्छा विद्याध्ययन की न हो।

प्र० २७—अमरीका की ऋतु का हाल कहिए ?

उ०—अमरीका में शीत अधिक होता है। उत्तर और पूर्वीय रियासतों में खूब हिम पड़ता है। मध्य रियासतों में भी हिम की बड़ी धूम रहती है। अक्टूबर में जाड़े का आरम्भ होता है, मई में जाकर कहीं सरदी कम होती है। हां, पश्चिमी और दक्षिणी रियासतों में नाम मात्र हिम पड़ता है। उस देश में बाहर सोने का रिवाज़ नहीं। सब ऋतुओं में लोग अन्दर सोते हैं। अमरीका के अधिकांश भाग की ऋतुयें भारतीय लोगों के लिए मुआफ़िक नहीं; क्योंकि अपने लोग अधिक शीत सहन करने के आदी नहीं। हमारे अधिक लोगों को जाड़े में बहुत कष्ट होता है। शीत का अन्त मई में हो जाता है, जून के आरम्भ में मौसिम खुलता है, और सेप्टेम्बर तक खासी गर्मी रहती है। ये महीने खुश्क कहलाते हैं; क्योंकि इन दिनों वर्षा नहीं होती। एक आध बौछाड़ पड़ जाय तो पड़ जाय। इस-लिए भारतीय सज्जनों को अमरीका के शीत के लिए तैयार रहना चाहिए।

प्र० २८—यदि किसी को कोई विषय बिलकुल अलेहदा पढ़ना हो तो उसके लिए वह क्या करे ?

उ०—अमरीका में भी भारत की तरह ट्यूशनें चलती हैं। किसी विषय को पढ़ने के लिए खास उस्ताद मिल जाते हैं, जिनको कुछ फ़ीस देकर आदमी पढ़ सकता है। कम से कम

डेढ़ रुपया एक घण्टा रोज़ाना के हिसाब से उपार्जन होता है। कालेजों में भी केवल एक ही विषय पढ़ने के लिए प्रबन्ध किया जा सकता है। हां, उसके लिए कालेज के प्रेसीडेण्ट से आज्ञा लेनी पड़ती है। इस प्रकार जो विषय जिसे पढ़ना हो, वह उसी विषय को पढ़ने के लिए प्रबन्ध कर सकता है। इन बातों का निर्णय विद्यार्थी लोग अमरीका जा कर कर सकते हैं, अधिक यहां लिखना व्यर्थ है।

चाहिए कि अमरीका के कृषि-कालिजों में जाकर कृषि-विज्ञान सीख अपने देश की कृषि का सुधार करें। इसके अतिरिक्त फलों का व्यवसाय (Fruit Industry) इतनी महान है कि जिसके द्वारा करोड़ों रुपये की आमदनी हमारे देश को हो सकती है। हमारे देश के भाइयों को फल-व्यवसाय सीखना चाहिए। अमरीका वाले इसके द्वारा अर्बों रुपये कमाते हैं। हमारे देश के लोग भी अपनी दरिद्रता शीघ्र दूर कर सकते हैं, यदि वे कला-कौशल, कृषि और फल-व्यवसाय पर अधिक ध्यान दें।

मशीनों का प्रयोग जानने के लिए यह ज़रूरी है कि हमारे छात्र अमरीकन कल कारख़ानों में जाकर काम करें। उनको कलों के पुरज़ों का उपयोग समझना चाहिए। सैकड़ों विद्यार्थी केवल मशीनों का काम सीखने के लिए जाने चाहिएँ।

प्र० ३०—ख़र्च के वास्ते किस प्रकार का सिक्का साथ लेना ठीक होगा? नोट, हुन्डी, पौंड, इनमें से किसमें अधिक सुभीता होगा?

उ०—अंगरेज़ी पौंड सब जगह चलते हैं, इसलिए यदि थोड़ा रुपया साथ लेना हो तो अपने साथ अङ्गरेज़ी पौंड लेजाना अच्छा होगा। यदि अपने साथ अधिक रुपया ले जाना हो तो किसी बैंक की हुन्डी न्यूयार्क के किसी बैंक के नाम करवा ले। हिन्दुस्तानी रुपये अपने साथ कभी न ले; क्योंकि चांदी का भाव बहुत शीघ्र बढ़ता घटता रहता है और सोने का भाव प्रायः एक सा रहता है। ख़ास कर अङ्गरेज़ी पौंड तो इस अंश में बहुत अच्छे हैं। संसार के किसी भाग में चले जाओ अङ्गरेज़ी पौंड सब जगह चलेगा।

यात्री को यदि योरुप के रास्ते जाना हो तो इस बात का हमेशा ध्यान रखे कि उसके पास इटली तथा फ्रान्स आदि देशों के अधिक सिक्के न हों। जब इन मुल्कों के बन्दरगाहों पर जहाज़ जाकर ठहरे और कुछ सिक्कों की आवश्यकता हो तो किसी बड़े सिक्के को न भुनावे। जहां तक हो सके छोटे सिक्कों से अपना काम चलाना चाहिए; क्योंकि अमरीका में यह सिक्के बिलकुल नहीं चलते और यही दशा चीन जापान के सिक्कों की है।

प्र० ३१—अमरीका में जात पाँत का कुछ लिहाज़ है या नहीं?

उ०—अमरीका में भारतीय ढंग की जात पाँत नहीं है। हां, रंग का पक्षपात अवश्य है। पश्चिमी रियासतों में एशिया के लोगों से मज़दूर लोग घृणा करते हैं। बस, यही अमरीकन जात पाँत समझिए।

प्र० ३२—हिन्दुस्तान की कौन सी वस्तु साथ ले जाने से वहां अधिक लाभ हो सकता है?

उ०—हिन्दुस्तानी पीतल के बर्तनों की अमरीका में अच्छी क़दर है। लकड़ी तथा हाथी दांत के काम को भी वहां के लोग अच्छा पसन्द करते हैं। लेकिन मैं किसी भी भारतीय यात्री को ऐसी ऐसी चीज़ें अपने साथ ले जाने की सलाह नहीं दूंगा, जबतक उसका अमरीका में किसी से ख़ास परिचय न हो। अनजान आदमी तो ऐसी चीज़ें ले जाकर अवश्य ही घाटा उठावेगा; क्योंकि वहां मज़दूरी इतनी अधिक है कि जिससे अनजान भारतीय को घाटा होने की ही सम्भावना

है। सब से बेहतर यही होगा कि मनुष्य यहां अपने देश में घूम कर इन सब चीज़ों की क़ीमत दरयाफ़्त कर इनके बेचने वालों से अपना सम्बन्ध करले। जब अमरीका पहुंच जाय तो वहां के लोगों से जान पहिचान कर फिर सौदा मंगवाने की तजवीज़ करे। इस तरीक़े से काम करने में अधिक लाभ की आशा है। करने वाले को अपने उद्देश्य का पता लग जाता है। यूंही अपने साथ चीज़ें लेजाना और वहां जाकर इधर उधर भटकते फिरना बहुत ही हानिकारक होगा।

प्र० ३३—तजारत पेशा लोग अमरीका में क्या कुछ लाभ उठा सकते हैं ?

उ०—मैं अपने धनी तजारत-पेशा लोगों से सविनय निवेदन करूंगा कि वे एक बेर अमरीका अवश्य जावें। वहां जाकर तजारत का ढङ्ग देखें। कोई मनुष्य इन सब बातों के विषय में इस तरह से नहीं बतला सकता; क्योंकि ये बातें देखने के साथ सम्बन्ध रखती हैं। अमरीका के जो लोग तजारत के काम में पड़ते हैं, तथा जो बाहर की दुनियां से तजारत करते हैं वे ख़ुद बाहर निकल कर इन सब बातों की जांच पड़ताल करते हैं। जिन्हें साधारणतया, अमरीका में जाकर थोड़ी पूंजी से काम शुरू करना है वे लोग जापानियों की तरह काम आरम्भ कर सकते हैं। वे छोटी छोटी फलों की दूकानें, चुरुट और कमीज कालर आदि बेचने के स्टोर, या विलियर्ड रूम Billiards Rooms खोल अपना काम शुरू करें, धीरे धीरे पूंजी बढ़ा और काम हाथ में ले सकते हैं। इन सब बातों के लिए बेहतर यही होगा कि लोग सब से पहिले वहां जायें। वहां आकर वहां के रङ्ग ढङ्ग देखें। फिर जैसी आवश्यकता समझें

वैसा काम करें। चीनी जापानी ऐसा ही कर रहे हैं। उनको सफलता प्राप्त हुई है। कोई कारण नहीं कि हमको भी कामयाबी हासिल न हो।

प्र० ३४—क्या अमरीका में कुछ अपने तजारत-पेशा लोग हैं? यदि हैं तो वे क्या करते हैं?

उ०—हां, हैं। पूर्वीय रियासतों में न्यूजरेज़ी नामक एक रियासत है। वहां पर अपने बहुत से मुसलमान भाई फेरी का काम करते हैं। न्यूयार्क, बोस्टन आदि नगरों में भी अपने कुछ लोग ऐसे हैं जो इधर उधर का माल बेंच रुपया कमाते हैं। दक्षिणी रियासतों में बहुत से पठान हैं, जो यहां के शाल दुशाले मंगवा कर खूब धन पैदा करते हैं। हिन्दुओं को तो छूत छात ने मार दिया और जो छूत छात से बचे हुए लोग वहां गए भी, वे मज़दूरी के सिवाय दूसरा काम नहीं जानते। भला पंजाब के किसान सिक्ख तजारत की बातें क्या जानें? यह काम तो मारवाड़ी, खत्री तथा वैश्यों के करने का है। इसलिए हमारे देश के लोग, जिन्हें ईश्वर ने बुद्धि दी है, देश के बाहर जावें और अपने दूसरे मुसलमान भाइयों की तरह धन कमाने का उद्योग करें। यूनाइटेड स्टेटज़ में कोई भी ऐसा शहर नहीं, जहां पर थोड़े बहुत जापानी न हों। वे वहां जाकर ज़मीन ख़रीदते हैं, बस्तियें बनाते हैं, दूकानें खोलते हैं और इस प्रकार अपने देश को लाभ पहुंचाते हैं। भारतीय लोगों ने अभी तक ऐसा नहीं किया। कारण यह है कि अभी तक देश के शिक्षित लोगों का ध्यान अमरीका की तरफ नहीं खिंचा। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि मेरे देशबन्धु शीघ्र ही इस ओर ध्यान दें और अपने देश का दारिद्र्य दूर करने का उद्योग करें।

इसके साथ मैं यह भी बतला देना ज़रूरी समझता हूं कि जितने भाई अमरीका में तजारत के काम में लगे हैं वे अपने आपको भारतीय नहीं कहते, बल्कि फारस अथवा अफगानिस्तान के रहने वाले बतलाते हैं; क्योंकि भारतीय कहने से उनके कामों में बहुत सी बाधायें पड़ती हैं। ऐसा क्यों है? इसका कारण बुद्धिमान स्वयं समझ लें।

प्र० ३५—क्या अमरीका में चीनी जापानी कुछ तजारत करते हैं? उनका हाल विस्तार से बतलाइये।

उ०—अमरीका में चीनी जापानी भिन्न भिन्न पेशों में लगे हुए हैं। चीनी अधिकांश कपड़े धोने का काम करते हैं। अमरीका का शायद ही कोई ऐसा नगर होगा जहां चीनी धोबी न हों। थोड़ी सी पूंजी लेकर ये लोग अमरीका पहुंचते हैं और धीरे धीरे अपने पुरुषार्थ से धनवान हो जाते हैं। सनफ्रांसिस्को के चीनी बड़े धनी हैं; उनकी कोठियां चलती हैं। चीनियों के होटल बड़े बड़े शहरों में हैं, इनको "चाप सुई" कहते हैं। उनमें सभी प्रकार के लोग जाकर खाना खाते हैं। ये होटल खूब चलते हैं। इन कामों के अतिरिक्त चीनी लोग अन्य धन्धों में भी रुपया लगाते हैं; परन्तु अधिकांश चीनी लोग अमरीका में कुलिओं का काम ही करते हैं।

अब रही जापानियों की बात। सो जापानी लोग बहुत से अंशों में चीनियों से बढ़े हुए हैं। इनकी दुकानें क़रीब क़रीब सभी शहरों में हैं। जापानी लोग बहुत सी ज़मीनें अमरीका में ख़रीद रहे हैं! इनकी बस्तियां बन रही हैं। कैलेफोर्निया में जापानियों ने कई लाख डालर की ज़मीन ख़रीदी है। ये लोग ठेका लेकर भी काम करते हैं। हमारे लोगों की तरह ख़ाली

मज़दूरी पर ये लोग बस नहीं करते, बल्कि सभी प्रकार की दस्तकारी ये लोग करते हैं। जैसे हमारे लोग नाटाल, केपकालोनी आदि दक्षिणी अफ्रीका के नगरों में दुकानें खोल कर वहां के अंगरेज़ लोगों की तरह धन कमाते हैं। इसी प्रकार जापानी लोग भी अमरीका में द्रव्योपार्जन के कामों में लगे हुए हैं। अपने भ्रमण में मैंने, छोटे छोटे कस्बों में जापानी बस्तियां देखीं, जहां जापानी लोग घर बना रहे हैं। इरद गिरद की ज़मीन ख़रीद कर उसकी पैदावार को शहरों में बेचते हैं। लासएञ्जलस के इरद गिरद जापानियों के खेत देख कर मैं बड़ा हैरान हुआ था।

मेरे देशबन्धु भी यदि उद्योग करें तो बहुत कुछ कर सकते हैं। हमें चाहिए कि घर से निकलें और चीनी जापानियों की तरह हिम्मत कर अमरीका में दुकानें खोल खूब धन पैदा करें। तभी इस देश का उपकार होगा।

प्र० ३६—थोड़े ख़र्च पर किस अमरीकन युनिवर्सिटी में भारतीय छात्र विद्याध्ययन कर सकते हैं?

उ०—प्रायः सभी स्टेट युनिवर्सिटियां थोड़े ख़र्च पर विद्यार्थियों को पढ़ाती हैं। कहीं थोड़ी कहीं ज़ियादा, फ़ीस ली जाती है। पश्चिमी रियासतों की युनिवर्सिटिओं में बहुत थोड़ी फ़ीस देकर विद्यार्थी विद्या-लाभ कर सकते हैं।

प्र० ३७—अमरीका की किस युनिवर्सिटी में पोलिटिकिल [illegible] (सम्पत्ति-शास्त्र), राजनीति, विधान आदि विषय पढ़ाए जाते हैं?

[illegible] यों के पढ़ने के लिए न्यूयार्क, शिकागो,

इलिनाय, मेडिसन, वरकले, पालोआल्टो आदि शहरों में अच्छी अच्छी युनिवर्सिटियां हैं, जहां बड़े बड़े धुरन्धर आचार्य इन विषयों की शिक्षा देते हैं। यदि किसी को उनके कैटेलाग मंगवाने हों तो—

THE REGISTRAR,
University of Chicago,
Chicago Ill. U. S. A.

या, THE REGISTRAR,
Columbia University,
New York City, U. S. A.

या, THE REGISTRAR,
Harward University,
Cambridge, Mass. U. S. A.

या, THE REGISTRAR,
University of Collifornia,
Berkeley, Cal. U. S. A.

उपरोक्त पतों पर पत्र व्यवहार करें।

प्र० ३८—पिट्सबर्ग में जो कारनेगी विश्वविद्यालय है उसमें भारतीय छात्र क्या कुछ सीख सकते हैं ?

उ०—कारनेगी युनिवर्सिटी में विद्युत, रसायन, वाणिज्य, वायुयान, खनिज, पदार्थ तथा आरोग्य सम्बन्धी विद्यायें सिखाई जाती हैं। बढ़ई, लुहार, बिजली का काम, इंजिन आदि बनाना, लोहे को ढालना तथा उसके भांति भांति के औज़ार

बनाना, ऐसे ऐसे काम भी वहां सिखाए जाते हैं। वहां मेके-निकल इञ्जीनियर आदि डिग्रियां मिलती हैं।

प्र० ३६—सुना है अमरीका में काले रङ्ग वाले को बड़ी तकलीफ़ होती है, कृपया इसका हाल बतलाइये ?

उ०—अमरीका में एक करोड़ से ज़ियादा हब्शी हैं। यह हब्शी उन हब्शियों के वंशज हैं जो अफ्रीका से पकड़ कर ज़बरदस्ती इधर नई दुनियां में लाए गए थे। भेड़ बकरियों की तरह ये लोग बिकते थे। जब १७८३ में अमरीका के लोग स्वतंत्र हुए और उन्होंने मनुष्य मात्र के अधिकारों को समझा तो उनमें हब्शियों के अधिकारों की वकालत करने वाले लोग भी पैदा हो गये। धीरे धीरे सम अधिकारों के प्रचारकों की संख्या बढ़ी और अमरीकन रियासतों में काले लोगों के हक़ में बहुत से नियम बनाये गये। परन्तु दक्षिणी रियासतों में वैसा ही हाल रहा; इसलिए सारे देश में अशान्ति रही। काले लोगों के बचाओ के लिए अक्सर झगड़े हो जाया करते थे।

अन्त में उत्तरी और दक्षिणी रियासतों के बीच एक बड़ा भारी युद्ध हुआ। उत्तरी रियासतों के लोग जीते। हब्शी स्वतंत्र हो गये। लेकिन हारने वालों के दिलों में वही भाव बने रहे। वे बाद में अपना फल लाये। अब दशा यह है कि ज़रा से काले रंग पर होटल वाले खाना खिलाने से जवाब दे देते हैं। पर जान पहिचान होने के बाद फिर हमारे देश-वासियों से अमरीकन लोग बुरा बर्ताव नहीं करते। लेकिन यह मैं स्पष्ट कहूंगा कि अमरीका में रंग का पक्षपात बहुत अधिक है। हमारे काले विद्यार्थियों को इसके लिए

लिए रुपया चाहिए। सौ रुपये के खर्च पर अच्छी प्रकार पढ़ाई हो सकती है। अमरीका में बहुत सी कन्याएँ स्वावलम्बन करती हैं। परन्तु मेरी राय यह है कि भारतीय स्वावलम्बन करने वाली कन्याओं का अमरीका जाना ठीक नहीं। अभी हमको अपने लड़कों को अमरीका भेजना चाहिए। कन्याओं के भेजने का अभी समय नहीं आया। मेरी इस राय के खास कारण हैं, जो मैं इस पुस्तक में लिखना उचित नहीं समझता।

प्र० ४३—क्या अमरीकन क़ानून भारतीय लोगों को ऐसा ही बचाता है जैसा अमरीकनों को?

उ०—अमरीका के क़ानून सब जातियों के लिए एक जैसे हैं, किसी के साथ खास रिआयत नहीं है। यदि किसी भाई को वहां किसी से झगड़ा हो जाय तो उसे फ़ौरन ही किसी वकील attorney के पास जाकर उसे अपना झगड़ा सौंप देना चाहिए। वह सब प्रबन्ध कर देता है। फ़ीस आदि का फ़ैसला पहले कर लेना ज़रूरी है।

प्र० ४४—सुना है कि अमरीका वाले भारतीय मज़दूरों को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते हैं और कभी कभी मारते भी हैं?

उ०—यह सच है। अमरीकन मज़दूर हमारे मज़दूरों को बड़ी घृणा-दृष्टि से देखते हैं। मैंने बहुत कष्ट इसी लिए उठाया है। अधिकांश मज़दूर योरप के निवासी होते हैं। यदि योरप की पैदायश न भी हो तो भी वे ठेठ अमरीकन नहीं होते। पैसिफिक कोस्ट पर हमारे लोगों के साथ अधिक ज़ुल्म होता है; क्योंकि उधर अपने पाँच चार हज़ार लोग हैं—यह सब पगड़ियां बांधते हैं। यदि हमारे आदमी भी टोपियां रखतें और

से बाहर हमारे लिए बहुत कुछ काम किया है। सनफ्रांसिस्को के पास ओकलैण्ड नामक एक शहर है, वहां की थियासोफिकल सोसाइटी ने हमारे कुलियों की बहुत मदद की थी। शिकागो में एक मेडम हौवर्ड है। बड़ी धर्मशीला स्त्री है। उसने बीस वर्ष से मांस खाना छोड़ रखा है; विद्यार्थियों की हमेशा मदद किया करती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि अमरीकन थियासोफिकल सोसाइटियों से भारतीय छात्रों को बहुत कुछ सहायता मिल सकती है। पर इतना ख़्याल रहे कि हमारे कई एक नालायक़ विद्यार्थियों ने ऐसी ऐसी सोसाइटियों द्वारा बहुत सा नाजायज़ फ़ायदा उठाया है; इसलिए अब इन अमरीकन सज्जनों को ज़रा होशियारी से काम करना पड़ता है। बहुत अच्छा हो, यदि वहां जाने वाले विद्यार्थी पहले यहां से किसी भद्र थियासोफिस्ट या वेदान्ती सज्जन की सिफारशी चिट्ठी साथ लेते जावें, और चिट्ठी देने वाले भी अपने कर्तव्य को समझ कर पत्र दें; क्योंकि बाहर वाले हमारे इन्हीं भाइयों के आचार को देख अपनी राय हमारी जाति के विषय में क़ायम करते हैं।

प्र० ४२—क्या अमरीका में भारतीय स्त्रियों के पढ़ाने का भी प्रबन्ध हो सकता है?

उ०—क्यों नहीं हो सकता। वहां स्त्रियों के लिए जुदा पाठशालाएँ और स्कूल हैं, जहां पांच चार साल परिश्रम करने पर अच्छी ख़ासी लियाक़त हो जाती है। यह न समझ लेना चाहिए कि वहां स्त्रियां ईसाई हो जावेंगी। ऐसे स्कूल वहां पर हैं जो ईसाई मत के बड़े विरोधी हैं। वहां सब विचारों की कुमारिकाएँ पढ़ती हैं। हां, ऐसी पाठशालाओं में पढ़ने के

लिए रुपया चाहिए। सौ रुपये के ख़र्च पर अच्छी प्रकार पढ़ाई हो सकती है। अमरीका में बहुत सी कन्याएँ स्वावलम्बन करती हैं। परन्तु मेरी राय यह है कि भारतीय स्वावलम्बन करने वाली कन्याओं का अमरीका जाना ठीक नहीं। अभी हमको अपने लड़कों को अमरीका भेजना चाहिए। कन्याओं के भेजने का अभी समय नहीं आया। मेरी इस राय के ख़ास कारण हैं, जो मैं इस पुस्तक में लिखना उचित नहीं समझता।

प्र० ४३—क्या अमरीकन क़ानून भारतीय लोगों को ऐसा ही बचाता है जैसा अमरीकनों को?

उ०—अमरीका के क़ानून सब जातियों के लिए एक जैसे हैं, किसी के साथ ख़ास रिआयत नहीं है। यदि किसी भाई को वहां किसी से झगड़ा हो जाय तो उसे फ़ौरन ही किसी वकील attorney के पास जाकर उसे अपना झगड़ा सौंप देना चाहिए। वह सब प्रबन्ध कर देता है। फ़ीस आदि का फ़ैसला पहले कर लेना ज़रूरी है।

प्र० ४४—सुना है कि अमरीका वाले भारतीय मज़दूरों को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते हैं और कभी कभी मारते भी हैं?

उ०—यह सच है। अमरीकन मज़दूर हमारे मज़दूरों को बड़ी घृणा-दृष्टि से देखते हैं। मैंने बहुत कष्ट इसी लिए उठाया है। अधिकांश मज़दूर योरप के निवासी होते हैं। यदि योरप की पैदायश न भी हो तो भी वे ठेठ अमरीकन नहीं होते। पैसिफ़िक कोस्ट पर हमारे लोगों के साथ अधिक ज़ुलम होता है; क्योंकि उधर अपने पाँच चार हज़ार लोग हैं—यह सब पगड़ियां बांधते हैं। यदि हमारे आदमी भी टोपियां रक्खें और

वैसे ही रहें तो शायद झगड़ा मिट जावे। परन्तु वे ऐसा नहीं करते। उनकी जुदा जुदा टोलियाँ शहरों में घूमती हुई उनके भारतीय जन्म को प्रगट कर देती हैं; क्योंकि गोरों का यह ख़्याल है कि भारतीय मज़दूर थोड़े पर नौकरी कर लेते हैं और उनको हानि पहुंचाते हैं, इसलिए झगड़े हो जाते हैं। जो भाई वहां जाकर शान्ति से रह अपना काम निकालना चाहें उन्हें चाहिए कि वे अमरीकनों की भाँति रहें। मांस न खावें, लेकिन पोशाक और रहन-सहन वैसा ही रखें, ताकि बाज़ार में कोई उनकी तरफ उङ्गली न उठावे। नहीं तो, यदि पगड़ी पहनी हो, तो अवश्य ही लड़के लोग तालियां पीटेंगे और खिल्ली उड़ावेंगे।

प्र० ४५—अमरीका वालों का धर्म क्या है? क्या वे सब ईसाई हैं?

उ०—अमरीका वाले सभी ईसाई नहीं हैं। वहां स्वतंत्र विचार रखने वाले बहुत लोग हैं। वे ईसा को एक बहुत अच्छा मनुष्य मानते हैं। दूसरे धर्मों की पुस्तकें शौक से पढ़ते हैं। कोई पक्षपात नहीं है। हां, कुछ ऐसे भी जाहिल, पक्षपाती, स्वार्थी लोग हैं जो अभी उसी धुन में फँसे हैं, जिसमें तीन सदी पहले योरप निवासी थे। कुछ सच्चे दिल से भी ईसा को ईश्वर मानते हैं, पर उनकी संख्या दिन प्रतिदिन कम हो रही है। अधिकांश लोगों ने बाइबल के अर्थों पर नई टिप्पणियां कर उसको आधुनिक ज़रूरतों के अनुसार बना लिया है और अपने कट्टरपन को दूर कर ऐसी बातें लेली हैं जिनका सार्वभौमिक धर्म के साथ संबंध है। अपने आपको जुदा जुदा नामों से पुकारते हैं। कोई क्रिश्चियन साइन्टिस्ट,

कोई न्युयार्ट, कोई सिपरिचुलिस्ट, कोई क्रिश्चियन सोशलिस्ट आदि। जिन बातों से देश की वर्तमान आवश्यकताएँ पूर्ण हों उन बातों का बहुत ख्याल रखते हैं। सब मतों के ग्रन्थ पढ़ते हैं और अपनी ज़रूरतों के अनुसार उनके उपदेशों को ग्रहण कर लेते हैं।

अमरीका एक शिक्षित देश है। शिक्षित देश का धर्म भी वहां की शिक्षा के अनुसार ही होगा। इसी कारण अमरीका में विकाश-सिद्धान्त के अनुसार धर्म, देश की ज़रूरतों के मुताबिक़ असली चोला पहिनता जाता है और जो बातें संकीर्णता की ओर ले जाने वाली हैं, या जिन बातों का असली जीवन के साथ सम्बन्ध नहीं है, वे पीछे हटती जाती हैं।

प्र० ४६—क्या अमरीका में सब प्रकार के फल मिलते हैं ?

उ०—अमरीका में आम को छोड़ कर क़रीब क़रीब सभी फल मिलते हैं। तरकारियाँ भी सब प्रकार की मिलती हैं। सेब, सन्तरा, आडू, नाशपाती ऐसे बढ़िया मिलते हैं कि क्या कहना। संतरा बड़ा मीठा और बिना बीज के होता है। इस क़िस्म के संतरे को 'नेवल' कहते हैं। जो लोग फलाहारी हैं वे निश्चिन्त रहें। अमरीका फलों का घर है। वहां आदमी चाहे किसी प्रान्त में रहे, सभी शहरों में फल खाने को मिलेंगे और क़ीमत भी क़रीब क़रीब एक जैसी है; हमारे देश की तरह नहीं। यहां तो पंजाब प्रान्त में फलों की अधिकता रहती है और दूसरे प्रान्तों में बहुत थोड़े फल खाने को मिलते हैं। यदि मिलें भी तो बड़े महंगे, जिनको अमीर ही खा सकें।

प्र० ४७—अमरीका में किस प्रकार की गवर्नमेन्ट है ?

उ०—अमरीका में रीपब्लिकन ढंग की शासन-प्रणाली

है। इसके अनुसार देश के लोग अपना राजा आप चुनते हैं। किसी शाही नस्ल के आदमी को राज्य नहीं मिलता। योग्यता के अनुसार पदवी मिलती है। जो भाई इस विषय में विशेष जानना चाहें वे किसी अंग्रेज़ी पुस्तक को पढ़ें। इस पुस्तक में मैं विस्तार से नहीं वतला सकता।

प्र० ४८—आप अमरीका जाने के लिए लोगों को अधिक क्यों कहते हैं? क्या जापान, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों में हमारे छात्र विद्याध्ययन नहीं कर सकते?

उ०—कर सकते हैं। हमारे विद्यार्थी जापान जाते हैं। वहां से इल्म हुनर सीख कर अपने देश में आराम करते हैं। कई एक युवक जापान से लौट कर आये हैं और आजकल मिलों में काम कर रहे हैं; परन्तु मेरी अपनी यह राय है कि हमारे युवकों को विद्याध्ययन के लिए अमरीका जाना चाहिए। क्योंकि वहां भाषा की दिक़्क़त नहीं है। वहां अंग्रेज़ी बोली जाती है और हमारे युवक बहुत जल्द विद्या-लाभ कर सकते हैं। फ्रांस, जर्मनी, जापान आदि दूसरे देशों में पहले तो भाषा की कठिनता पड़ती है, इसके लिए साल छः महीने चाहिए; दूसरे इन देशों में निर्धन विद्यार्थियों का गुज़ारा नहीं हो सकता। वहां अमीर मा वाप के लड़के पढ़ सकते हैं। अमरीका में निर्धन विद्यार्थी के लिए धन कमाने के अवसर हैं और, क्योंकि हमारे अधिकांश लोग निर्धन हैं, इसलिए हम लोगों के वास्ते अमरीका सब से अच्छा है।

एक बात और भी है। अमरीका एक ऐसा देश है जहां हर प्रकार की उन्नति हो रही है।

यदि मनुष्य वहां जाकर केवल धन कमाने का व्यवसाय

उ०—केलेफोर्निया की ऋतु शीतप्रधान नहीं है; लेकिन सर्दियों में खूब जाड़ा पड़ता है। यह नहीं समझ लेना चाहिए कि यहां जाड़ा पड़ता ही नहीं। उत्तरी केलेफोर्निया में हिम भी गिरता है, लेकिन अधिक नहीं। दक्षिणी केलेफोर्निया में पंजाब जैसी ऋतु है। ओरेगन में भी बहुत शीत नहीं। कभी कभी हिम पड़ जाता है। दक्षिणी रियासतों में नाम मात्र हिम पड़ता है। गरमी भी खूब होती है। अरीज़ोना और केलेफोर्निया का कुछ दक्षिणी प्रान्त तो गर्मियों में भाड़ बन जाता है, वहां सख़्त गरमी पड़ती है।

पूर्व और उत्तर की रियासतों में खूब हिम पड़ता है। मध्य-पश्चिमीय रियासतों में भी बहुत हिम गिरता है, लेकिन वहां गरमी भी सख़्त पड़ती है। जिस शिकागो में दिसम्बर, जनवरी के महीनों में पारा दस बीस दर्जे शून्य से नीचे उतर जाता है, वहां गर्मियों में सूर्य भगवान भी अपनी कसर निकाल लेते हैं। परन्तु इधर अधिक महीने शीत ऋतु के होते हैं। इसलिये अमरीका शीतप्रधान देश समझना चाहिए। न्यूइंग्लेण्ड की रियासतें तो जाड़े के लिए प्रसिद्ध हैं; मध्य-पश्चिम भी जाड़े में हिम का घर बन जाता है। पश्चिम की केवल ओरेगन और केलेफोर्निया इन दो रियासतों में इतना अधिक शीत नहीं होता। अधिक शीत केवल उत्तर पूर्वीय भागों में समझना चाहिए।

...यह शीत 'सूखक शीत' है। इसी ऋतु में ही खाने ...ता है। यहां की आबोहवा बहुत गुणकारी ...म सुन कर ही डर न जाना चाहिए। मैं शिकागो ...के दिनों में रात के बारह बजे सख़्त सर्दी

हैं। कृषि सीखने वाले भाई इस युनिवर्सिटी के रजिष्ट्रार को पत्र भेज पहले से ठीक ठाक कर सकते हैं।

जितनी स्टेट युनिवर्सिटियां हैं क़रीब क़रीब सभी में कृषि का प्रबन्ध है। हमारे छात्र जिस प्रान्त में जावेंगे, वहीं उन्हें विश्वविद्यालय मिलेगा, जहां वे अपनी इच्छानुकूल विद्याध्ययन कर सकते हैं। सभी रियासतों में अच्छी अच्छी युनिवर्सिटियां हैं। हां, कृषि के लिए पश्चिमी रियासतों में जाना ज़रा अधिक लाभकारी होगा; क्योंकि पश्चिम ही कृषि का घर है। वहां की ऋतु भी बहुत ज़ियादा शीत नहीं।

प्र० ५०—कृषि कार्य सम्बन्धी सूचनाएँ मंगवानी हो तो किससे पत्र-व्यवहार करें?

उ०—वाशिङ्गटन डी० सी० शहर में गवर्नमेन्ट की ओर से एक बहुत बड़ा कृषि-विभाग है। उसकी ओर से एक डायरक्टरी छपती है। अमरीकन मेशीनों के केटेलाग भी Director of the Interior के अध्यक्ष को लिखने से मिलते हैं। जिन भाइयों को कृषि सम्बन्धी की कोई वाकफ़ीयत दरकार हो वे—

THE DIRECTOR,
Agricultural Department,
Washington D. C.,
U. S. A.

इस पते पर पत्र-व्यवहार करें। एक कार्ड भेजने पर सूचना मिल सकती है।

प्र० ५१—केलेफोर्निया पश्चिम में है, वहां की ऋतु का कुछ हाल कहिए? और अमरीका के दूसरे हिस्सों की भी ऋतु?

उ०—केलेफोर्निया की ऋतु शीतप्रधान नहीं है, लेकिन सर्दियों में खूब जाड़ा पड़ता है। यह नहीं समझ लेना चाहिए कि वहां जाड़ा पड़ता ही नहीं। उत्तरी केलेफोर्निया में हिम भी गिरता है, लेकिन अधिक नहीं। दक्षिणी केलेफोर्निया में पंजाब जैसी ऋतु है। ओरेगन में भी बहुत शीत नहीं। कभी कभी हिम पड़ जाता है। दक्षिणी रियासतों में नाम मात्र हिम पड़ता है। गरमी भी खूब होती है। अरीज़ोना और केलेफोर्निया का कुछ दक्षिणी प्रान्त तो गर्मियों में भाड़ बन जाता है, वहां सख्त गरमी पड़ती है।

पूर्व और उत्तर की रियासतों में खूब हिम पड़ता है। मध्य-पश्चिमीय रियासतों में भी बहुत हिम गिरता है, लेकिन वहां गरमी भी सख्त पड़ती है। जिस शिकागो में दिसम्बर, जनवरी के महीनों में पारा दस बीस दरजे शून्य से नीचे उतर जाता है, वहां गर्मियों में सूर्य भगवान भी अपनी कसर निकाल लेते हैं। परन्तु इधर अधिक महीने शीत ऋतु के होते हैं। इसलिये अमरीका शीतप्रधान देश समझना चाहिए। न्यूइङ्गलेण्ड की रियासतें तो जाड़े के लिए प्रसिद्ध हैं, मध्य-पश्चिम भी जाड़े में हिम का घर बन जाता है। पश्चिम की केवल आरेगन और केलेफोर्निया इन दो रियासतों में इतना अधिक शीत नहीं होता। अधिक शीत केवल उत्तर पूर्वीय भागों में समझना चाहिए।

लेकिन यह शीत 'खुश्क शीत' है। इसी ऋतु में ही खाने का आनन्द आता है। वहां की आबोहवा बहुत गुणकारी है। हिम का नाम सुन कर ही डर न जाना चाहिए। मैं शिकागो में रहा हूं। जाड़े के दिनों में रात के बारह बजे सख्त

में 'स्केटिङ्ग' देखने जाया करता था; बड़ा आनन्द आता था। चेहरे के सिवाय शरीर का कोई भाग नंगा नहीं रखते, सब शरीर ढका रहता है। चाँदिनी रात में, जाड़े के दिनों में, जमे हुए पानी के ऊपर स्त्री पुरुषों का 'स्केट' करना बड़ा ही भला दीख पड़ता है। कहने का तात्पर्य्य यह है कि अमरीका की ऋतु बड़ी नीरोग और बलकारी है।

प्र० ५२—अमरीका में जो सिक्ख लोग हैं वे क्या काम करते हैं?

उ०—अमरीका में अधिकांश भारतीय बन्धु पंजाब प्रान्त से आते हैं। क्योंकि वही प्रान्त छूत छात के जंजाल से मुक्त है। वे पंजाबी भाई मज़दूरी का काम करते हैं। बहुत से लकड़ी की मिलों में काम करते हैं; बहुत से भाई किसानों के यहां नौकर हैं; बहुत से लोहे की गोदियों में मज़दूरी करते हैं। कई ऐसे भी हैं जो गर्मियों में फलों का काम कर लेते हैं, और बाक़ी कई महीने बैठ कर खाते हैं। थोड़े भाई ऐसे हैं जिन्होंने ज़मीन ख़रीदी है और अपनी स्त्रियां भी साथ ले गए हैं। वे वहां घर-बार बना कर बस गए हैं।

मगर दुःख है कि भारत से शिक्षित लोग अमरीका नहीं गये। ऐसे लोग वहां जाते हैं जिनको दुकानदारी आती नहीं, जिनके खानदान में कभी किसी ने वणिज नहीं किया। इस-लिए अमरीका जाकर हमारे लोग कुछ ऐसा फ़ायदा नहीं उठाते। हमारे यहां के मारवाड़ी, बनिये, खत्री, खोजे सिन्धी आदि लोगों को अमरीका जाना चाहिए, ताकि वे वहां जाकर खूब धन पैदा कर सकें।

प्र० ५३—कृपा कर अमरीका के सिक्के का कुछ हाल बत-लाइए?

उ०—अमरीका के सिक्के को डालर कहते हैं। यह भारी होता है और रुपये से बहुत बड़ा है। इसकी क़ीमत तीन रुपये दो आने के बराबर समझिए। यह डालर सौ सेन्टों का होता है। पैसे को सेन्ट कहते हैं। अमरीका का एक एक सेन्ट हमारे दो पैसे के बराबर होता है। एक डालर के छोटे सिक्के, आधा डालर (Half Doller), क्वार्टर (Quarter), डाइम (Dime) और निकल (Nickel) हैं। एक निकल पांच सेन्ट का होता है और हमारे ढाई आने के बराबर उसकी क़ीमत है। क्वार्ट पचीस सेन्ट का होता है और हमारे हिसाब से उसकी क़ीमत साढ़े बारह आने समझिए। क्वार्टर को टूबिट्स (Two Bits) भी कहते हैं। डाइम दस सेन्टों का होता है।

यदि किसी आदमी को तीन डालर रोज़ मज़दूरी मिले तो हमारे हिसाब से उसे नौ रुपये छः आने रोज़ मिलते हैं।

प्र० ५४—अमरीका का डाक महसूल भी बतलाइये ?

उ०—अमरीका को यदि चिट्ठी भेजनी हो तो उस पर ढाई आने के टिकट लगाने चाहिएं। यदि पोस्टकार्ड हो तो उस पर केवल एक आने का टिकट काफ़ी होगा। बाक़ी पेकटों पर यहां से दुगना पोस्टेज लगता है।

प्र० ५५—यदि कोई आदमी अमरीका से किताबें मँगवाना चाहे तो वह क्या करे; क्योंकि सुना है कि वहां वी० पी० का क़ायदा नहीं है?

उ०—अमरीका में वी० पी० का सिस्टम नहीं है। वहां से यदि किताबें मँगवानी हों तो पहले अच्छी प्रकार जांच पड़ताल कर लेनी चाहिए। जो प्रसिद्ध कम्पनियां

बेचती हैं उनसे पत्र-व्यवहार कर लेना ज़रूरी है। फरज़ करो कि किसी को Library of Oratory की पुस्तकें मंगवानी है उसे चाहिए कि—

THE WARNER COMPANY,
Akron,
Ohio. U. S. A.

इस कम्पनी को अपनी इच्छा प्रगट कर उनसे उनका सूचीपत्र मँगवावे। यह भी दरयाफ़्त करले कि उनके पास आजकल किन किन पुस्तकों पर क़ीमत घटाई गई है, फिर अपनी मरज़ी अनुसार पुस्तकें मँगवावे।

शिकागो में एक दुकान है—

THE BOOK SUPPLY CO.,
266—268 Wabas Ave,
Chicago, Ill, U. S. A.

उस दुकान से हर क़िस्म की किताबें मिलती हैं। इस दुकान का सूचीपत्र एक पोस्टकार्ड भेजने पर मिल सकता है। पहले सूचीपत्र मँगवा कर, क़ीमत ठीक कर, फिर पैसे भेज पुस्तकें मँगवानी चाहिएं। यदि कोई मेगज़ीन मँगवानी हो तो भी उसी कम्पनी की मारफ़त मँगवाई जा सकती है। इस कम्पनी के सूचीपत्र में अमरीका की सब मेगज़ीनों के नाम और क़ीमतें दी रहती हैं और जिनकी क़ीमत घटाई जाती है उनके नाम भी लिखे रहते हैं।

पुस्तकें मँगवाने वाले महाशयों को पहले सूचीपत्र मंग-

चाना चाहिए। हां, यदि मेगज़ीनें मेगज़ीन छापने वालों के दफ्तर से मंगवाई जावें तो सूचीपत्र की ज़रूरत नहीं है।

प्र० ५६—कृपा करके अच्छी अच्छी अमरीकन पत्रिकाओं के नाम बतलाइए और उनकी क़ीमत तथा प्रकाश-स्थान का नाम भी लिखिए?

उ०—लीजिए महाशय, मैं आपको अच्छी अच्छी अमरीकन मेगज़ीनों का नाम, धाम, मूल्य बताए देता हूं—

नाम	मासिक या साप्ताहिक	धाम	मूल्य
Current Literature	मा	*New York City N. Y. U. S. A.*	तीन डालर वार्षिक
World's Work	मा	"	"
Literary Digest	सा	"	"
Twentieth Century Magazine	मा	*Boston, Mass, U. S. A.*	"
Munsey Magazine	मा	*New York City*	एक डालर
American Magazine	मा	"	डेढ़ डालर
Farmer's Review	सा	*Chicago*	एक डालर
Garden Magazine	मा	*New York City*	"
Electrical Review	सा	"	तीन डालर
Engineering Magazine	मा	"	"
Education	मा	*Boston*	"
Kindergarten Magazine	मा	*New York City*	एक

Kindergarten Review	मा	*Spring filed* *N. Y. U. S. A.*	एक डालर
Ohio Educational Monthly	मा	*Akron (Ohio)*	"
Popular Education	मा	*Boston*	"
Primary Education	मा	"	"
School and Home Education	मा	*Phile delphia*	एक डालर २५ सेन्ट
Little Folks	मा	*Salem (Mass)*	एक डालर

लड़कों के वास्ते—

Youth's Companion	सा	*Boston*	एक डालर ७५ सेन्ट

लड़कों के वास्ते—

Youth's Companion	सा	*Boston*	एक डालर ७५ सेन्ट

यह थोड़े से नाम मेरे पाठकों के लिए काफी होंगे। यह याद रहे कि क़ीमत में डाक महसूल शामिल नहीं है, वह अलहदा देना पड़ेगा।

प्र० ५७—बहुत से लोग यहां से बैठ बैठे ही अमरीका की डिग्रियां हासिल कर लेते हैं, कृपया बताइए यह क्या बात है?

उ०—अमरीका में कई एक स्कूल और कालेज ऐसे हैं जो धूर्त लोगों ने रुपया ठगने के लिए खोल रखे हैं, उनमें वे नावाक़िफ आदमियों की हजामत करते हैं। अमरीकन रियासतों के विश्वविद्यालय इन कालेजों को Recognize नहीं

करते। परन्तु दूर देशों के लोग इनके जाल में फँस कर रुपया बरबाद कर देते हैं। भारतीय सज्जनों को ऐसे स्कूल तथा कालेजों से बचना चाहिए। अमरीका में ऐसे धोखा देने वाले लोग भी बहुत हैं, क्योंकि अमरीका एक स्वतन्त्र देश है और सब के लिए खुला है। इसलिए योरप के डाकू, बदमाश, उचक्के, धूर्त अमरीका में छुपे छुपे अपनी दुकान्दारी चलाते हैं और आज़ादी का नाजायज़ फ़ायदा उठाते हैं।

मैं अपने देशी भाइयों से निवेदन करता हूं कि वे ऐसे पत्र व्यवहारी स्कूल, कालेजों से बचें। कई भाई हिपनाटिज़म आदि बातों के फेर में आ अपना रुपया भेज देते हैं। अमरीका की ऐसी ऐसी डिग्रियां बिल्कुल रद्दी हैं। वहां उनको कोई नहीं पूछता।

प्र० ५८—योरप के लोग जो अमरीका जाकर अमरीकन बन जाते हैं वे कैसे? क्या भारतीय भी अमरीकन बन सकते हैं?

उ०—अमरीका जाकर यदि किसी को अमरीकन बनना हो तो उसे चाहिए कि वह अदालत में जा अपनी इच्छा प्रगट करे। उसको उस इच्छा प्रगट करने का काग़ज़ मिल जाता है—इस काग़ज़ पर एक डालर ख़र्च होता है। यह पहला काग़ज़ (First Paper) कहलाता है। पांच साल के बाद उस पेपर पर दो अमरीकनों की साक्षी लिखवा कर उसे गवर्नमेण्ट के दफ़्तर में भेज देने से पक्का काग़ज़ मिल जाता है। मगर पांचवा साल, जो आख़िरी वर्ष होता है, उसमें निवेदक को एक ही रियासत में रहना ज़रूरी है। तभी निवेदक उस रियासत का बाशिन्दा कहला सकता है। अधिकांश योरपीय

लोग जाते ही कच्चे कागज़ ले लेते हैं; क्योंकि तब उनको नौकरी मिलने में आसानी होती है। फौज़ में भी शीघ्र भरती हो सकते हैं।

प्र० ५९—हम अमरीका के दान विभाग का कुछ हाल जानना चाहते हैं। वहां के नागरिक दान का उपयोग किस प्रकार करते हैं?

उ—आपको यदि यह जानना है तो आप—

Charities Publication Committee,
105 East, 22nd St, Newyork City.

इनको लिखिये।

प्र० ६०—हम चाहते हैं कि अमरीका न जायँ, बल्कि यहीं बैठे बैठे पत्र-व्यवहार द्वारा कुछ पढ़ें। इसके लिए क्या करना चाहिए?

उ०—यदि आप राजनीति, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, साहित्य, इतिहास आदि विषय पढ़ना चाहते हैं तो आप—

The University of Chicago,
Correspondence Study Dept.,
U of C (Div T) Chicago, Ill. *U. S. A.*

इनको लिखिए।

यदि आप कृषि पढ़ना चाहते हैं तो आप—

The Home Correspondence School,
185 Springfiled, Mass, *U. S. A.*

इनसे पत्र-व्यवहार कीजिए।

यदि आप बढ़ई का काम तथा भवन निर्माण विद्या सीखना चाहते हैं तो आप—

The American School of
Correspondence,
Chicago, Ill. U. S. A.

इनसे लिखा पढ़ी कीजिए।

प्र० ६१—आपकी राय में हमारे विद्यार्थियों को अमरीका जाकर क्या सीखना चाहिए, जिससे देश का बहुत उपकार हो?

उ०—यह प्रश्न बड़े महत्व का है। इस पर भिन्न भिन्न सम्मतियों का होना सम्भव है। मेरा अपना यह ख्याल है कि इस समय हम लोगों को अमरीका जाकर वहां की शिक्षा-प्रणाली का अच्छी प्रकार अध्ययन करना चाहिए। 'Education' शिक्षा के पढ़ाने वाले बड़े बड़े धुरन्धर आचार्य कोलम्बिया युनिवर्सिटी में हैं। वहां जाकर हमारे युवकों को 'शिक्षा' के विषय को पांच चार साल खूब परिश्रम कर पढ़ना चाहिए।

शिक्षा के अतिरिक्त, अर्थशास्त्र (Political Economy), राजनीति विज्ञान, तजारत और व्यापारों का ज्ञान (Trade and Commerce), बैंकों की विद्या (Banking), इन विषयों को कई साल परिश्रम कर पढ़ें तो बड़ा काम हो। हमको यदि बड़ी बड़ी कम्पनियां चलानी हैं तो पहले कम्पनियों के चलाने लायक योग्यता होनी ज़रूरी है। हम लोगों में बड़ी भारी कमी इस बात की है कि हम Organization संघ की महिमा नहीं जानते, और यदि महिमा जानते हैं तो उसके अनुसार

अमल नहीं कर सकते। हमारे कई एक युवक अमरीका जापान आदि देश से लौट कर आए हैं। लोग शिकायत करते हैं कि उन्होंने कुछ काम नहीं किया। वे नहीं जानते कि काम करने के लिए पूंजी चाहिए। पूंजी के मालिक धन लगा कर यह आशा करते हैं कि जो आदमी इल्म हुनर सीख कर आया है वह कम्पनी चलाना भी जानता होगा—यह भारी भूल है। कम्पनी चलाने की विद्या ही अलग है। इसी लिए कई एक लोगों को भारी मायूसी हुई है। हो क्यों नहीं? जो आदमी ग्लास बनाना सीख कर आया है, या रसायन-शास्त्र का पंडित होकर आया है, वह कम्पनी नहीं चला सकता। यहां उसका वास्ता पड़ता है उन लोगों से जिन्होंने बड़ी मुश्किल से धन पैदा किया है। वे लोग कैसे अपना रुपया ख़तरे में डाल सकते हैं, जब तक कि उनको कम से कम पाश्चात्य संघ का कुछ ज्ञान न हो। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि भारत का धनिक समुदाय Capitalist class के लोगों को भी पाश्चात्य संघ का ज्ञान हो, ताकि वे अमरीका और जापान आदि देशों से लौटे हुए भाइयों के साथ मिल कर काम कर सकें।

इसी लिए हमारे धनिक नवयुवकों को अमरीका की बड़ी बड़ी युनिवर्सिटिओं में जा अर्थशास्त्र, तजारत का काव्य आदि, सम्पत्ति-शास्त्र के विषयों को पढ़ना चाहिए। जब वे उन विषयों के पंडित होंगे तो उनका अपने अपने इल्म हुनर सीख कर लौटे हुए भाइयों के साथ मिल कर काम करने में अच्छी प्रकार सफलता हो सकती है; क्योंकि ऐसी दशा में दोनों एक दूसरे की सहायता कर सकते हैं। केवल एक के ऊपर निर्भर रहने से काम नहीं चल सकता।

यह तो बड़ी बड़ी बातें हैं। हमारे लोग अमरीका जाकर, जूते, छाता, चाकू, पेन्सिल, ट्रंक, सूटकेस, बाइसिकल, मोटर-कार आदि बहुत सी बातें सीख सकते हैं। कहां तक आदमी लिख सकता हैं। बढ़ई, लोहार, राज, Designing, pumping इन बातों के जानने की कितनी ज़रूरत है। एक मेकेनिकल इञ्जीनियरिङ्ग को ही ले लीजिये, इसके संबंध के विषय यह हैं—

Machine Shop work—Vertical Milling Machine Motor-driven shops—Shop Lighting—Forging—Electric Welding—Tool Making—Metallurgy—Manufacture of Iron and Steel—High Speed Steel Making—Pattern Making—Founding work—Automatic coal and ore Handling Appliances—Construction of Boilers—Air compressing Steem Pumping—Refrigerating—Gas Engine Making—Automobile Making—Machine Designing etc.

यह केवल मैंने दर्शा दिया है कि हमें एक एक व्यवसाय में कैसी कैसी बातें सीखनी हैं। मेरे एक वाकिफ़कार ने मुझ से ज़िकर किया कि उसके मोटरकार का कोई पुरज़ा खराब हो गया था। सारे भारत में उसको ठीक करने वाला न मिला अब वह पेरिस बनने गई हुई है। यह हाल है हमारे देश का!

कहने का तात्पर्य्य यह है कि अमरीका जाकर यह ज़रूरी नहीं कि मनुष्य कोई बड़ा हुनर ही सीखे। साधारण काम सीख आने पर भी बहुत कुछ उन्नति हो सकती है, क्योंकि अमरीका के लोग कारीगरी और हुनर के प्रत्येक काम में हम से आगे हैं।

इसके अतिरिक्त कृषि-विद्या का सीखना बड़ा ज़रूरी है।

अमरीका कृषि में बहुत बढ़ा चढ़ा है। वहां जाकर हमारे युवक कृषि के बड़े बड़े सिद्धान्तों को अमली सीख सकते हैं। वहां के फल वनस्पति संबंधी जो कल-कारखाने हैं उनमें जा, वहां का ज्ञान प्राप्त कर, अपने देश में आ फलों के व्यवसाय का काम चला सकते हैं। भारत में करोड़ों रुपये के आम होते हैं। यदि हम लोग उनको डिब्बों में डाल देशान्तर भेज सकें— जैसे अमरीका, योरप की चीज़ें टीन के डिब्बों में बंद हो इधर आकर बिकती हैं—तो हमारे देश को बड़ा भारी लाभ पहुंच सकता है। परन्तु हमारे फल यहीं सड़ जाते हैं। उनको लाहौर से कलकत्ता तक तो अच्छी तरह पहुंचा नहीं सकते। रास्ते में ही सड़ गल जाते हैं—कुछ बच रहे तो बच रहे। अमरीका में जैसे Refringator बर्फानी गाड़िओं का ढंग है वैसा इस देश में भी हो सकता है। इन बर्फानी गाड़िओं द्वारा अर्बों रुपये के फल अमरीका के एक किनारे से दूसरे किनारे तक चले जाते हैं और बिलकुल नहीं सड़ते। क्या ऐसा यहां नहीं हो सकता? हो सकता है। पर करने के लिए विद्या, शिक्षा, उद्योग चाहिए।

प्र० ६२—अब क्या कोई और ख़ास बात आप बतलावेंगे जिसका ज्ञान लेना भारतीय विद्यार्थी के लिए श्रेयस्कर होगा?

उ०—अमरीका की हिन्दुस्तानी स्टूडेन्टस् एसोसियेशन ने अमरीका में शिक्षा नाम की एक पुस्तिका प्रकाशित की है, उसका कुछ भाग अमरीका जाने वाले विद्यार्थियों की सुविधा के लिए यहां ज्यों का त्यों उद्धृत कर देते हैं। मुझे विश्वास है कि भारतीय छात्रों को इस अवतरण से बहुत कुछ सहायता मिलेगी।

American System of Education

There are about 600 universities and colleges in the United States. Most States of the Union maintain a State University, which is usually located at a distance from crowded cities. Besides the State Universities, there are universities maintained by the income of private endowments. Michigan, Minnesota, Wisconsin, Illinois, California are State Universities, while Yale, Harvard, Columbia, Cornell, Princeton, Chicago, and Stanford are private universities. Of all these universities, about 23 are of the first grade. These have faculties of liberal arts, sciences, engineering, agriculture, medicine, law.

Most of the colleges, as distinguished from the universities, have only the faculties of arts and sciences. But there are colleges of medicine and colleges of engineering, and several states have separate colleges of agriculture. Massachusets Institute of Technology generally known as "Boston Teck." is a good example of an Engineering college.

Besides these universities and colleges, there are technical schools maintained by big manufacturing concerns. They are generally meant for the employees of the factory. These technical institutions are good for those students who are self-supporting and may secure employment in such factories. The teaching in factory schools is much inferior to that of universities or colleges, and foreigners (specially those from Asia) have practically no chance to enter such factories.

A. CREDIT SYSTEM AND CREDIT DEFINED AND EXEMPLIFIED.

American college and university education is based on credit system. In many colleges and universities one credit or unit is equivalent to one lecture a week. Thus a student carrying 17 credits or units is attending 17 lectures in a week for a period of one semester, or half-year. A credit is arranged in such a way that a student of average merit has to put in only 3 hours' work a week for it, i. e., one hour's lecture and 2 hour's work at home to prepare the lesson assigned in the lecture period. Thus a student carrying 17 credits or units has to put in a total of $17 \times 3 = 51$ hours a week.

In some universities (Chicago, for example) the quarter system is used. At Chicago an under-graduate carries three subjects, reciting in each five times a week for twelve weeks.

B. TIME AND CREDIT REQUIRED FOR UNDERGRADUATE WORK

The undergraduate work extends over a period of 4 years. The first year after matriculation is the Freshman year; the second year, Sophomore; the third, Junior, and the fourth year or the year of graduation is Senior year. Students belonging to these classes are known respectively as Freshmen, Sopohomores, Juniors, and Seniors.

The four years of undergraduate work are divided into ..t semesters,—i. e., there are two semesters in a Col-

lege year. During these four years a student has to complete about 135 credits.*

C. CREDIT LIMIT

Generally there is a limit to the number of credits one may carry each semester. Usually no one is allowed to take less than 12 credits and more than 17 credits in a semester. Whatever be the number of credits a student carries, he has to complete 135 credits to get the degrees. Thus if one takes only 12 credits every semester he has to spend about 11 semesters to become a graduate.

COURSES OF STUDY

I. College and Department

A University generally contains 5 Colleges :—

A. *College of Liberal Arts and Sciences.*

B. College of Engineering.

C. College of Agriculture.

D. College of Medicine.

E. College of Law.

(Liberal Arts and Sciences comprise all pure Sciences and subjects, for example :—Physics, Chemistry, Botany, History, Literature, Mathematics, etc.)

In some Universities there are additional Colleges than the above mentioned five and Colleges of Dentistry,—e. g, *College of Commerce and Business Administration* :

*The requirements in different universities and even in different departments of a university differ. Generally 130 to 140 units of undergraduate work are required for graduation.

each College is subdivided into various departments,—e. g., in the College of Liberal Arts and Science there are Physics department, Chemistry department, Mathematics department, History department, etc, In the College of Engineering for example there are departments of Electrical Engineering, Department of Civil Engineering, Department of Sanitary Engineering, etc. Similary there are departments in other Colleges also.

2. Requirements of Different Colleges

It has been said before that it requires about 135 credits to graduate and these 135 credits take about 4 years to complete. Now all the Colleges just mentioned do not require the same number of credits for graduation. Generally the College of Engineering credit requirement is more than that of any other College. Thus in a particular case, the college of Engineering requires 142 credits while the College of Liberal Arts and Sciences require 132 and the Agricultural College requires only 130.

3. Subjects Tought

The subject requirement for a degree is a little more complicated than the credit requirement. When it is mentioned that 142 credits are necessary for graduation it means that those 142 credits should be chosen from a specified group or groups of subjects prescribed by the department. The subjects required fall under three general classes :—

a. Major Subject.

b. Minor Subject.
c. Elective Subject.

(a) A Major subject "consists of courses amounting to 20 hours (credits) chosen from among those designated by a department and approved by the faculty of the College. Such courses are to be exclusive of those elementary or beginning courses which are open to Freshmen (1st year) and inclusive of some distinctly abvanced work."

Sometimes the credit requirement in a major subject is more than 20 but it is seldom more than 24. Major subjects are more or less specialized studies of a particular subject.

(b) Minor subjects are those which are also higher studies for Allied subjects. Thus for a student of Physics, higher Physics would form Major subject while higher Chemistry and Mathematics will form Minor subjects. A minimum of 20 units of Minor subject is necessary for graduation.

(c) Elective subjects—Elective subjects are generally those which are prescribed for general culture and are other than the main and allied subjects. Thus for a student of Physics, Chemistry and Mathematics are allied or minor subjects while Economics, History, etc., form electives. The number of electives required for graduation is different for different Colleges.

One to six credits constitute a subject and several subjects form a semester's study. To show the relation be-

ween subject and credit, the following is reproduced from one of the Bulletins of a 1st Class University :—

CURRICULUM IN CHEMISTRY

First year

First Semester

	Subjects	hours or credits
1.	Noye's Inorganic Chemistry (non metallic elements)	3
2.	German or French	4
3.	College Algebra	3
4.	Plane Trigonometry	2
5.	Rhetoric and Themes	1
6.	Gymnasium (Physical training)	1
7.	Military Drill	1
	Total	15 hrs.

First Year

Second Semester

Subjects	hours or credits
Inorganic Cnemistry and qualitative Analysis	6
German or French	4
Analytical Geometry	5
Gymnasium	1
Military Drill	1
Drill Regulations	1
	18 hrs.

The following is from Liberal Arts' department :—

General Business Curriculum

First Year

First Semester

Subject	hours, or credits
Principles of Accounting	3
Economic resources	3
Rhetoric and Themes	3
Gymnasium	1
Military Drill	1
College Algebra	3
Electives	4
	18 hrs.

Second Semester

Subject	hours, or credits
Principles of Accounting	3
Economic History of the U. S	3
Rhetoric and Themes	3
Gymnasium	1
Drill Regulations	1
Military Drill	1
	12 hrs.

For the first two years of College the subjects taught in various departments of a College are practically the same. This is specially true for the College of Engineering. From the third year specialization begins and the subjects are divided according to Majors, Minors and Electives.

ACADEMIC YEAR

Sessions:

American Universities are scattered throughout a country twice as large as India. The academic sessions begin and close according to local climatic or weather conditions, which vary a great deal.

Nine months of college work constitutes one academic year.

The session begins in September and extends to the end of January; and from February to the middle of June. Thus the academic year is divided into two semesters.

The University of California starts and closes one month earlier. The University of Chicago has four quarters of twelve weeks each.

SUMMER SESSIONS:

Summer sessions or more precisely Summer schools as they are called are an unique American institution unknown in India.

Sumer vacation lasts for three months from the middle of June to the middle of September.

Almost every large University holds a summer session of about six weeks. Distinguished professors, specialists exchange their seats during this short period teaching in colleges other than their own.

Daily Attendence:

In the Universities classwork lasts from 8 in the morning till 6 in the evening with the intermission of an hour

at noon. The University Library, however keeps its doors open till 10 P. M., presenting facilities of study and research work to the earnest students.

REGISTRATION

A Student's University career begins with registration. In minor details Universities differ from one another as to the mode of registration, but fundamnetally they agree on the main requirements. These are:

(A) ADJUSTMENT OF PREREQUISITES.

The Student is required to furnish certificates and diplomas, etc, showing the subjects he has studied before in Indian schools and colleges, as well as a certificate of good moral character. By this amount and standard of work the University authorities determine his standing.

(B) FORMALITIES AND FEES.

After the adjustment of the pre-requisites for entrance into any of the departments or colleges of the University the student has to fill up various forms mentioning intended subjects of study. This must be accompanied by payment of fees when required. Of course the fees vary according to subjects as well as Universities.

(C) LATE REGISTRATION

An extra charge is made if registration is not completed on the prescribed date. After a certain period has elapsed no more registration is allowed. Students must ensure timely registration by starting from India on such a date that they may reach here in time for registration.

PREREQUISITES :

Every student entering a University has to fulfill a certain educational requirement which is called Prereqisite. A "matriculate of any Indian University, must produce certificates of high school study covering all the subjects necessary for admission, Physics, Chemistry with laboratory work and Solid Geometry and Trigonometry are among the prerequisites. If the student has not taken these subjects in the high school, he has to take them after joining the University here but this work will not be counted for graduation.

It is advisable to come to this country after finishing at least one year of College work though two year's of College work in India will make it much easier for the student to follow courses leading to graduation in an American University.

Credits in addition to matriculation for any college work in an Indian university are adjusted as far as they are equivalent to courses given in an American university.

EXAMINATION SYSTEM

A. FINAL EXAMINATION AND GRADE

Unlike the Indian Universities, where two year's work is tested by an examination at the end of the period, the American Universities hold examinations at the end of each semester which are final for the courses taken by a student in that semester. The final grade in any one sub-ject is not the grade obtained in the final examination but

in some other semester and not all other subjects which he took along with it. Thus from the Curriculum of Chemistry for first semester of the freshman year (p. 7) it is seen that a student has to take up 7 subjects including Gymnasium and Military Drill. Now if he fails to pass in College Algebra he has to repeat only that subject in some other semester and not any one of the remaining six. There is a minimum number of credits in which a student has to pass. This minimum varies between 8 and 12. If the final grade of a student is not above the passing mark in this minimum number of credits for two semesters, he is dropped from the roll of the University. Thus at California University if a student can not keep 8 credits for two consecutive semesters, he is asked to leave the University.

THE DEGREES

American Universities award the following Degrees:—

B. S.—Bachelor of Science.
A. B.—Bachelor of Arts.
L. L. B.—Bachelor of Law.
M. S.—Master of Science.
A. M.—Master of Arts.
Ph. D.—Doctor of Philosdphy.
D. D. S.—Doctor of Dental-Surgery.

Some Universities such as Yale give Ph. B. which means Bachelor of Philosophy and is equivalet to B. S. or A. B. Students in schools of Pharmacy get Ph. G.. Graduate in Pharmacy after two years of college work. All of what has been said up till now applies only to under-

graduate work, i. e., to work which prepares one for the degrees of B. S. or A. B. The requirements for the Bachelor's degree are about 135 units of College work which generally extends over a period of four years and comprises the Major subjects, the Minor subjects, the Electives and often a Thesis.

The requirements of Post graduate work will be dealt with under a separate heading.

THE GRADUATE SCHOOL

One feature of the first grade American Universities that should particularly commend itself to the Indian students is the ample opportunities of post graduate study and research. Graduation in fact is only the beginning of the higher specialized study. Most of the graduate schools are maintained at a very high level of efficiency; their equipment is most up to date and privileges of specialization are within reach of all earnest students.

The graduate schools offer to college graduates courses leading to the degrees of M. A. and Ph. D., and degrees of corresponding grade in the technical branches.

"They provide", to quote the U. S. Bulletin, "opportunities for advanced study in the arts and sciences and for research similar to those provided by the leading European Universities."

Thus the graduates of the Indian Universities will find it highly profitable to spend a couple of years in any of these graduate schools of America.